क्रांति के मुख्य दुश्मनों–साम्राज्यवाद तथा उसके खिदमतगार, दलाल नौकरशाह पूंजीपतियों और सामंतवाद के खिलाफ संचालित राष्ट्रीय और जनवादी क्रांति के दौरान, हालांकि भारतीय क्रांति या लोक जनवादी क्रांति की इस समूची प्रक्रिया में दो अलग-अलग प्रकार के बुनियादी कार्यभार हैं, पर उन्हें एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। चूँकि साम्राज्यवाद और उसके दलाल खिदमतगार भारतवर्ष का दलाल नौकरशाह पूंजीपति वर्ग सामंतवाद का हिमायती और उसका संरक्षक है, अतः साम्राज्यवाद को उखाड़ फेंकने का संघर्ष, और सामंतवाद के उन्मूलन का संघर्ष, दोनों एक-दूसरे से अंतरसंबंधित हैं। विपरीत तौर पर विचार किया जाए, तो चूंकि भारतीय समाज मुख्य रूप से सामंतवाद पर निर्भरशील है तथा साम्राज्यवाद और उसके दलाल चाकर– दलाल नौकरशाह पूंजीपतियों की छत्रछाया में संरक्षित है, अतः मरनोन्मुख सामंतवाद को उखाड़ फेंकने के संघर्ष तथा साम्राज्यवाद और उसी के द्वारा पैदा किये गये दलाल नौकरशाह पूंजीवाद का विनाश करने के संघर्ष को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। इसलिए राष्ट्रीय क्रांति और जनवादी क्रांति के दोनों बुनियादी कार्यभार एक ही साथ भिन्न-भिन्न भी हैं, फिर एक-दूसरे से गूंथे हुए भी हैं। अतः राष्ट्रीय क्रांति और जनवादी क्रांति को क्रांति की दो बिलकुल अलग-अलग मंजिलों के रूप में देखना गलत है। नव जनवादी क्रांति की प्रधान अन्तरवस्तु कृषि क्रांति है।

दूसरी मंजिल का काम क्रांति को उसकी अंतिम मंजिल तक आगे बढ़ाते हुए समाजवादी समाज की स्थापना करना है। पहली मंजिल दूसरी मंजिल की पूर्वशर्त है। सिर्फ भारतवर्ष की लोक जनवादी क्रांति के कार्यभारों को पूरा करने के जरिए ही हम समाजवादी क्रांति की आधारशिला रख सकते हैं। लोक जनवाद समाजवाद का एक अभिन्न अंग है, विश्व समाजवादी क्रांति का एक अभिन्न अंग है। लोक जनवाद और समाजवाद के बीच के अभिन्न व अविभाज्य संबंध को भूल जाना गलत है। फिर इन दोनों मंजिलों में घालमेल कर देना और एक ही छलांग में समाजवाद तक पहुंच जाने की बात सोचना भी उतना ही गलत और नुकसानदेह है।

नव जनवाद और समाजवाद के बीच की मंजिलों के दरम्यान कोई पूंजीवादी अधिनायकत्व की अन्तर्वर्ती मंजिल नहीं आएगी।

(भाकपा (माओवादी) दस्तावेज, भारतीय क्रांति की रणनीति और कार्यनीति, पृष्ठ-36, 37.)

विश्व के उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं और जनता के प्रधान दुश्मन साम्राज्यवाद को इस धरती से उखाड़ फेंक दें!

भारत की आजादी के लिए ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्ष में शहीद कामरेड्स भगतसिंह, राजगुरू और सुखदेव की स्फूर्ति से 23 मार्च को साम्राज्यवाद-विरोधी दिवस के रूप में मनाएं!

केन्द्रीय कमेटी, भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) का आह्वान!

केन्द्रीय कमेटी

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)

★ दुनिया के मजदूरों एक हो!

★ मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद जिंदाबाद!

★ सर्वहारा अंतरराष्ट्रीयतावाद जिंदाबाद!

★ विश्व समाजवादी क्रांति जिंदाबाद!

★ इंकलाब जिंदाबाद!

★ साम्राज्यवाद और सभी देशों के प्रतिक्रियावादी मुर्दाबाद!

★ रंगबिरंगे संशोधनवाद मुर्दाबाद!

★ विभिन्न देशों के सर्वहारा क्रांतिकारी पार्टियों व संगठनों की एकता जिंदाबाद!

★ साम्राज्यवाद-विरोधी क्रांतिकारी व जनवादी संगठनों व शक्तियों की एकता जिंदाबाद!

★ दुनिया के मजदूरों, उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं और उत्पीड़ित जनता की एकता जिंदाबाद!

★ उत्तर-आधुनिकतावाद, सुधारवाद, अर्थवाद, गांधीवाद, कानूनवाद आदि रंगबिरंगे सिद्धांत मुर्दाबाद!

★ भारत के शासक वर्गों का ब्राह्मणीय हिंदू विचारधारा मुर्दाबाद!

★ भारत के शासक वर्गों का विस्तारवाद मुर्दाबाद!

★ भारत नवजनवादी क्रांति जिंदाबाद!

★ भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) जिंदाबाद!

केन्द्रीय कमेटी

10-2-2018 **भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)**

विश्व के उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं और जनता के प्रधान दुश्मन साम्राज्यवाद को इस धरती से उखाड़ फेंक दें!

भारत की आजादी के लिए ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्ष में शहीद कामरेड्स भगतसिंह, राजगुरू और सुखदेव की स्फूर्ति से 23 मार्च को साम्राज्यवाद-विरोधी दिवस के रूप में मनाएं!

केन्द्रीय कमेटी, भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) का आह्वान!

प्रिय कामरेड्स!

23 मार्च। यह ब्रिटिश साम्राज्यवाद के गुलामी के जंजीरों से देश को मुक्त करने के लिए 'इंकलाब जिंदाबाद' और 'साम्राज्यवाद मुर्दाबाद' के नारे बुलंद करते हुए फांसी की तख्ते पर झूल कर अपने प्राणों को न्योछावर करने वाले महान देशभक्त, साहसिक योद्धाएं, कामरेड्स भगतसिंह, राजगुरू और सुखदेव का शहादत दिवस है। यह साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष की अमिट छाप छोड़ने वाला दिवस है। तब से लेकर आज तक देश और देश की जनता को साम्राज्यवाद की गुलामी जंजीरों से, शोषण, उत्पीड़न और भेदभाव से एवं साम्राज्यवाद के दलालों के शासन से मुक्ति प्राप्त करने के लक्ष्य से जारी संघर्षों में देश की उत्पीड़ित जनता, खासकर युवा पीढ़ी को उत्साहित करते हुए, उनमें धैर्य, साहस और आत्मबलिदान की चेतना को बढ़ाने वाली ऐतिहासिक दिवस है। देश में ब्रिटिश के औपनिवेशिक शासन की स्थापना से लेकर अब तक इस तरह के लाखों वीरों और लोगों के अनगिनत बलिदानों के परिणामस्वरूप ब्रिटिश साम्राज्यवादी परदे के पीछे हटने के 70 वर्ष बीतने के बावजूद, हमारे देश के दलाल शासक वर्ग - दलाल नौकरशाही पूंजीपति और बड़े सामंती वर्गों के देशद्रोही, साम्राज्यवादपरस्त और जनविरोधी नीतियों के कारण देश आज भी साम्राज्यवादी नयी-उपनिवेश की तरह परोक्ष शासन, मनमर्जी लूट और राजनीतिक नियंत्रण का शिकर है। भगतसिंह एवं उनके साथियों ने औपनिवेशिक गुलामी से मुक्ति हासिल कर आजाद भारत की स्थापना करने के साथ-साथ जिस

समतामूलक समाज, जहां एक आदमी के द्वारा दूसरे का शोषण न हो, की स्थापना के लिए सर्वोच्च बलिदान दिए थे, ऐसी व्यवस्था की स्थपना आज भी हासिल किए जाने वाला एक प्रधान कर्तव्य है। इस तरह की परिस्थितियों में, विश्व में उत्पीड़ित राष्ट्रों और उत्पीड़ित जनता के प्रधान दुश्मन के रूप में रही साम्राज्यवाद को इस धरती से पूरी तरह उखाड़ कर उत्पीड़ित राष्ट्रों और जनता को मुक्त करने के लक्ष्य से जारी विश्व समाजवादी क्रांति के तहत अग्रसर साम्राज्यवाद-सामंतवाद विरोधी नवजनवादी क्रांति में व्यापक जनता को बड़े पैमाने पर जुझारूपूर्ण तरीके से गोलबंद कर देश को मुक्ति दिलाने की संघर्ष को मदद करने के उद्देश्य से 2018 से हर वर्ष 23 मार्च को साम्राज्यवाद-विरोधी दिवस के रूप में पालन करने के लिए हमारी पार्टी के समूचे कतारों, पीएलजीए बलों, क्रांतिकारी व जनवादी जनसंगठनों को और चार जनवादी वर्ग - मजदूर, किसान, निम्नपूंजीपति और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के उत्पीड़ित जनता, दलित-आदिवासी-धार्मिक अल्पसंख्यकों-महिलाओं आदि उत्पीड़ित तबकों एवं उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं के जनता को केन्द्रीय कमेटी, भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) आह्वान करती है।

साम्राज्यवाद-युद्ध-सर्वहारा क्रांति

इस धरती पर वर्ग समाजों का आविर्भाव के बाद सदियों के वर्गसंघर्ष के परिणाम क्रम में आखरी वर्ग समाज - पूंजीवादी समाज का उद्भव हुआ। पूंजीवादी व्यवस्था में बार बार दुहराने वाले संकटों के क्रम में वह इजारेदारी पूंजीवाद के रूप में तब्दील होकर अनिवार्य रूप से समूचे विश्व को शोषण करने की दिशा में साम्राज्यवाद के रूप में परिवर्तित हुई। पूंजीवाद की शुरूआती दौर में रहे प्रगतिशील व्यापारिक चरण में, जनवाद के आधार पर (पूंजीवादी उत्पादक संबंधों के दायरे में ही सही) सामाजिक संबंध होते थे। पूंजीवाद की चरम अवस्था, साम्राज्यवाद की चरण में उसने अपनी प्रगतिशील लक्षण को पूरी तरह खो दिया और प्रतिक्रियावादी बन गये। यह मानव समाज को शोषण, उत्पीड़न, विध्वंस और विनाश के सिवाय और कुछ नहीं दे सकता। साम्राज्यवाद आज की विश्व के उत्पीड़ित राष्ट्रों और मजदूर-किसान आदि उत्पीड़ित जनता का खून पीने वाला शैतान बन गया है। साम्राज्यवादी देश और इजारेदारी संस्थाओं ने इजारेदार मुनाफें कमाने के लिए, अपने शोषणकारी हितों को हासिल करने के लिए और अपनी संकट को हल करने के लिए, अपने ताकत के मुताबिक विश्व

दरअसल देश में केन्द्रीय व विभिन्न राज्य सरकारों के जन विरोधी नीतियों के खिलाफ मजूदर, किसान, छात्र-युवा, बुद्धिजीवी, अध्यापक, कर्मचारी, शिक्षक, हस्तशिल्पियों, छोटे उद्योगों के व्यवसायी, व्यापारी, वकील, डाक्टर, हेल्थवर्कर, दलित, आदिवासी, धार्मिक अल्पसंख्यक मुस्लिम व इसाइयों, महिला, कवि, लेखक, कलाकार, सच्चे देशभक्त, पर्यावरण कार्यकर्ता आदि तबके, कश्मीर, उत्तर-पूर्व इलाके के राष्ट्रीयताओं द्वारा जारी सभी संघर्ष साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष का हिस्सा है। देश भर में हिंदू फासीवाद के खिलाफ जारी आंदोलन को विभिन्न उत्पीड़ित वर्ग, तबकों, उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं द्वारा जारी संघर्षों से जोड़ना होगा। क्योंकि, देश को अर्ध-औपनिवेशिक और अर्धसामंती व्यवस्था के रूप में पतित हो कर शोषण, उत्पीड़िन करने और भेदभाव बरतने वाला साम्राज्यवाद और उसके दलालों का खात्मा सामाजिक क्रांति द्वारा ही संभव है। मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद के सिद्धांत के मार्गदर्शन में सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में जारी विश्व समाजवादी क्रांति के तहत भारत जैसे पिछड़े देशों में नवजनवादी क्रांतियां और पूंजीवादी-साम्राज्यवादी देशों में समाजवादी क्रांतियों को सफल कर ही साम्राज्यवाद को इस धरती से उखाड़ कर जनवादी, समाजवादी समाज की स्थापना संभव होगी। आइए! सर्वहारा नेतृत्व में सर्वहारा के अंतरराष्ट्रीयतावाद को ऊंचा उठाते हुए साम्राज्यवाद और सभी देशों के उनके दलाल शासक वर्गों को उखाड़ कर शोषण, उत्पीड़न और भेदभावविहीन समाज की स्थापना करने की लक्ष्य से विश्व समाजवादी क्रांति को, उसके तहत हमारी देश में भारतीय क्रांति के पथप्रदर्शक, हमारी पार्टी के संस्थापक नेता और शिक्षक कामरेड चारू मजुमदार और कामरेड कन्हाई चटर्जी द्वारा निर्देशित मार्ग में सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में मजदूर-किसान के मित्रता के आधार पर, चार वर्गों - मजदूर, किसान, निम्नपूंजीपति वर्ग और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के संयुक्तमोर्चा के आधार पर नवजनवादी क्रांति को दीर्घकालीन लोकयुद्ध के रास्ते में आगे बढ़ाएंगे! उसके तुरंत बाद समाजवाद-साम्यवाद की तरफ कदम बढ़ाएंगे! इसके लिए हमारे देश में कामरेड भगतसिंह, राजगुरू, सुखदेव, चंद्रशेखर आजाद जैसे कई सच्चे देशभक्तों, हजारों की संख्या में कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों, विश्व भर में करोड़ों क्रांतिकारी व राष्ट्रीयताओं के वीर योद्धाओं, आम जनता ने अपनी अनमोल प्राणों को न्योछावर कर महान आत्मबलिदान दिया। उनके सपनों को साकार करेंगे!

संघर्ष और जनयुद्ध द्वारा ही हल हो सकता है। पूरे विश्व में सबसे क्रांतिकारी वर्ग - मजदूर वर्ग ही इसका नेतृत्व प्रदान करने में सक्षम है।

साम्राज्यवाद बहुत ही भयानक और अपराजेय दिखाई पड़ता है। लेकिन यह सही नहीं है। कामरेड माओ ने कहा है, ''अमेरिकी साम्राज्यवाद काफी शक्तिशाली है, लेकिन वास्तव में वह ऐसा नहीं है। वह राजनीतिक रूप से बहुत कमजोर है, क्योंकि वह व्यापक जन-समुदाय से अलग-थलग है तथा उसे हर आदमी नापसन्द करता है और अमेरिकी जनता भी नापसन्द करती है। देखने में तो वह बहुत शक्तिशाली मालूम होता है, लेकिन वास्तव में वह कोई ऐसी चीज नहीं है जिससे डरा जाए, वह एक कागजी बाघ है। ..... जब हम यह कहते हैं कि अमेरिकी साम्राज्यवाद एक कागजी बाघ है तो हम यह बात रणनीति की दृष्टि से कहते हैं। सम्पूर्ण रूप से हमें उसे नाचीज समझना चाहिए। लेकिन अलग-अलग अंशों की दृष्टि से उसका पूरा-पूरा ब्यौरा नजर में रखना चाहिए। उसके पंजे और दांत हैं। हमें उसे अंश-अंश करके नष्ट करना है। उदाहरण के लिए, अगर उसके दस दांत हों, तो पहली बार एक दांत तोड़ दो, बाकी नौ रह जाएंगे; दूसरी बार एक दांत और तोड़ दो, तब बाकी आठ रह जाएंगे। जब सब दांत तोड़ दिए जाएंगे, फिर भी पंजे बाकी रह जाएंगे। ..... अपनी पूरी शक्ति से लड़ना चाहिए और एक के बाद एक मोर्चा फतह करते जाना चाहिए। और इसमें समय लगेगा।'' (माओ की संकलित रचनावली, ग्रंथ-5, अमेरिकी साम्राज्यवाद कागजी बाघ है, पृष्ठ-287-288)। इससे स्पष्ट होता है कि आधुनिक हथियार, टेक्नोलोजी नहीं, बल्कि मानवों की चेतनापूर्वक भूमिका ही युद्ध में निर्णायक होगी। आज भारत शासक वर्ग बहुत ही शक्तिशाली राज्ययंत्र से लैस है, वह पहले के मुकाबले दिन ब दिन कई दांत बढ़ा रहा है। इसको साम्राज्यवादियों, खास कर अमेरिकी साम्राज्यवादियों का पूरा समर्थन प्राप्त है। हम जानते हैं कि भारत के राज्ययंत्र को उखाड़ फेंकना उतना आसानी कार्य नहीं है। यह सच है कि इसको अनगिनत दांत भी हैं। लेकिन हमें याद रखना होगा कि एक समय उच्चतम टेक्नोलोजी से लैस होने वाले अमेरिकी साम्राज्यवादी कई आक्रमणकारी युद्धों में विभिन्न देशों के हथियारबद्ध जनता के हाथों में हार का मुंह देखना पड़ा है। विश्व भर में बढ़ती अद्भुत क्रांतिकारी परिस्थिति मौजूद है। इसे सही ढंग से इस्तेमाल कर क्रांतिकारी शक्तियां आगे बढ़ने के बहुत ज्यादा अवसर मौजूद हैं।

को आपस में टुकड़ों में बांट देते हैं। इसके लिए वे भीषण व मानवजाति के लिए विनाशकारी युद्धों के लिए उतारू हो जाते हैं।

जैसाकि मार्क्सवाद के महान शिक्षक कामरेड लेनिन ने कहा था, साम्राज्यवाद का मतलब है इजारादार पूंजीवाद; पराश्रयी या जर्जर होने वाला पूंजीवाद; मरणावस्था में चटपटा रहा पूंजीवाद। साम्राज्यवाद, सर्वहारा क्रांति की पूर्वसंध्या है। साम्राज्यवाद कृत्रिम वित्तीय दुनिया का निर्माण कर, उसके जरिए अपनी संकट को हल करने के सपने का ताश के घर की तरह ढह जाने के कारण को लेनिन ने अपनी ''साम्राज्यवाद-पूंजीवाद की चरम अवस्था'' नामक किताब में भण्डाफोड़ किया। पूंजीवादी समाज में प्रधान अंतरविरोध है, उत्पादन का उच्च स्तर पर सामाजिकीकरण हो जाना और उत्पादन पर व्यक्तिगत मालिकाना रखने वाले मुट्ठीभर पूंजीपति घरानों का उसपर कब्जा कर लेना। यानी मुट्ठीभर साम्राज्यवादीयों द्वारा समूचे विश्व के जनता के खून को निछोड़ा जाता है।

इजारेदार पूंजीपति अपने इजारेदार ताकत के जरिए औसतन मुनाफे से अधिक ही इजारेदारी मुनाफें कमातें हैं। इजारेदारी मुनाफें कमाने के लिए वे मजदूरों के मेहनत की तीव्रता को बढ़ाकर लूटने के लिए उनके खून और पसीने पूरी तरह निछोड़ने श्रम के विभिन्न तरह के टेक्नोलोजी और पद्धतियों का इस्तेमाल करते हैं। इसके साथ-साथ वे विनिमय चीजों के दरें बढ़ाने के जरिए मजदूर, किसान आदि उत्पीड़ित जनता के कमाई से कुछ हिस्से पर कब्जा कर लेते हैं। अपने इजारेदार ताकत को इस्तेमाल कर कृषि उत्पादों के दरों को कम कर, किसान द्वारा उत्पादित मूल्य में कुछ हिस्सा पर कब्जा कर लेते हैं। दूसरी तरफ औद्योगिक चीजों के दरें बढ़ाते हैं। इजारेदारी दरों का निर्णय (monopoly pricing) कर इजारेदार संस्थानों से बाहर रहने वाले पूंजीपतियों के मुनाफें में एक हिस्से को भी हड़पने के काबिल हो जाते हैं। असमान विनिमय दरों के जरिए वे उपनिवेशिक एवं अर्ध-उपनिवेश देशों के जनता को लूटते हैं।

पूंजीवादी व्यवस्था में मुक्त व्यापार की प्रतिस्पर्धा इजारेदारी की तरफ धकेल देती है, लेकिन इजारेदारी व्यवस्था उस स्पर्धा को अंत नहीं कर सकती। इसके विपरीत इजारेदारी प्रतिस्पर्धा को और बढ़ावा देती है। उत्पादन के साधन दिन ब दिन कुछ ही इजारेदार घरानों के हाथों में केन्द्रीकृत हो जाने की वजह से इजारेदारी व्यवस्था के जरिए प्रतिस्पर्धा अंत हो जाने का प्रश्न ही नहीं उठता। जैसाकि लेनिन के कहा, ''प्रतिस्पर्धा और इजारेदारी व्यवस्था के दो विरुद्ध उसूलों

के एकता ही साम्राज्यवाद का सारांश है। यह एकता ही अंत में उसकी विनाश, यानी सामाजिक क्रांति की तरफ ले जाती है।''

इजारेदारी संस्थानें इजारेदारी मुनाफें लूटने प्रतिस्पर्धा करते हुए पिछड़े देशों को विभिन्न रूप से लूटने के वजह से उन देशों की स्वतंत्र सामाजिक उत्पादन शक्तियां नष्ट हो गयी है। अपने प्राकृतिक संसाधनों - लकड़ी, खनिज संपदाओं, खासकर तेल, प्राकृतिक गैस, कोयला, सोना, लोहा जैसे कई खनिजों, जंगलों, उपजाऊ जमीन, फसलों, रबर, चाय, काफी आदि प्लैंटेशनों साम्राज्यवादियों के कंपनियों के लूट का शिकार हो जाने के कारण उन देशों के जनता की जिन्दगी दूभर हो गयी है। वे अपने जमीन, निवास स्थलों को छोडकर शहरों के झोपड़पट्टियों में दूभर जिंदगी बिताने पर मजबूर हैं। उन देशों का औपनिवेशिक-अर्धऔपनिवेशिक और अर्ध-सामंती व्यवस्थओं के रूप में पतन हो गयी हैं। ये सब पराश्रयी स्वभाव वाली साम्राज्यवाद का ही व्यक्तीकरण है।

पूंजीवादी देशों में इजारेदारी संस्थानें अपने इजारेदारी मुनाफों की होड़ में अंतरराष्ट्रीय इजारेदारी संस्थनों का गठित हो जाना और उनके बीच आपस में समूची दुनिया को हिस्सों में बांटकर लूटना ही साम्राज्यवाद है। इस प्रक्रिया में जब समझौतें नहीं हो पाते या जब समझोतों को उल्लंघन किया जाता है या असमान वृद्धि की लक्षण के वजह से भी नए साम्राज्यवादी प्रतिद्वंद्वियों द्वारा जब अपने हिस्से की मांग उठाया जाता है तब विश्व युद्ध फूट पड़ने का दौर शुरू हो जाता है। इस अंतरविरोध/समस्या को हल करने के लिए साम्राज्यवाद द्वारा विभिन्न संदर्भों में कई हल्के इलाज की तौर-तरीके अपनायी गयी, पर वे सब विफल होती गयी, इतिहास ही इसका गवाह है। इस समस्या का हल करने उस के पास किसी भी जादूई हथियार नहीं है। इसलिए विनाश होने के अलावा उसके पास और कोई चारा नहीं है - इस तथ्य को मार्क्सवादी महान शिक्षक बार बार दोहराए थे। ऐतिहासिक तौर पर कुछ तथ्यों का पड़ताल करने से इस बात पर और स्पष्टता हासिल कर सकते हैं।

साम्राज्यवादी आर्थिक संकटों का प्रधान कारण उत्पादन पर्याप्त मात्रा में नहीं हो पाना नहीं है, बल्कि उत्पादन अधिक मात्रा में होना और उत्पादन शक्ति को इस्तेमाल नहीं कर पाना है। बेच नहीं सकने वाले माल बड़े पैमाने पर जमा हो जाना, कंपनियां बंद हो जाना, बैंकों को भंग करना, शेयरों का मूल्य गिर जाना, स्थायी बेरोजगारी, उत्पादन में अराजकता और युद्धों के कारण उत्पादन शक्तियां

आधारित अर्थव्यवस्था गठित व मजबूत कर, सुव्यवस्थित बदलाव लाने के लिए लाये गये फसल के लिए ऋण, फसल बीमा, न्यूनतम समर्थन मूल्य की योजनाएं एक के बाद एक विफल हुए हैं वे गरीबों के नाम पर कुबेरों का ही फायदा पहुंचाने द्वारा इन योजनाओं के खोखलेपन का भण्डाफोड़ हुआ है। हमारी पार्टी ने इस प्रतिक्रियावादी ''दिशा'' की खोखलेपन का भण्डाफोड़ करते हुए जनयुद्ध के क्रम में उत्पीड़ित जनता के एकजुटता और संगठित शक्ति को बढ़ाते हुए, उनके सामूहिक श्रम और प्रयासों पर निर्भर होकर गठित होकर कार्यरत क्रांतिकारी जन सरकारों को संरक्षित कर, विस्तार करना होगा और उन्हें विकसित करना होगा। इन क्रांतिकारी जन सरकारें जिस तरह उत्पीड़ित जनता को राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक तौर पर व्यापक और सक्रिय रूप से शामिल कर रहे हैं, योजनाबद्ध ढंग से जिस तरह स्वतंत्र व स्वावलंबी नीतियों लागू कर रहे हैं, उनके द्वारा लागू कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य, जंगल बचाव, न्याय, सांस्कृतिक जनकल्याण और आत्मरक्षा के नीतियां जिस तरह जनता के जीवन स्तर को बढ़ाने के साथ-साथ उत्पीड़ित जनता जिस तरह अपनी भविष्य को अपने हाथों से निर्माण कर रहे हैं, वे जिस तरह एक वैकल्पिक विकास के नमूने को देश की जनता के सामने ला रही हैं, हमें प्रभावशाली ढंग से बताना होगा। इस तरह व्यावहारिक तौर पर हमारी पार्टी के नेतृत्व में सामने लाने वाली सच्चा विकास के नमूने को, समाजवादी रूस और चीन के जैसे विकास के नमूने को एवं साम्राज्यवादी शोषण, उत्पीड़न एवं भेदभावविहीन नमूने को हमें देश भर में बड़े पैमाने पर प्रचारित व प्रसारित करना चाहिए।

दलाल शासक वर्गों द्वारा जनता के मौलिक अधिकार, उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं के अधिकार और रोजगार का अधिकार, कल्याकारी राष्ट्र आदि कई अधिकारों के बारे में पहले से किए जाने वाले सभी वादे झूठा साबित हुआ है। यह स्पष्ट है कि कदम कदम पर उनके द्वारा अमल में लाए जाने वाली सभी योजनाएं साम्राज्यवादी हितों से ही जुड़ा हुआ है। दरअसल वे जनता को कष्ट-तकलीफ, गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी, युद्ध और मौत के सिवा और कुछ नहीं दे सकते और नहीं देंगे। क्योंकि उनका हित जनता के हितों के पूरे विपरीत हैं। उनके हित साम्राज्यवादी लुटेरी व्यवस्था से जुड़ा हुआ है, जबकि उत्पीड़ित जनता का हित इस व्यवस्था को ध्वस्त कर एक नवजनवादी, समाजवादी व्यवस्था, साम्यवादी व्यवस्था की स्थापना से जुड़ी हुई हैं। यह वर्ग अंतरविरोध वर्ग संघर्ष, सशस्त्र

देश के शासक वर्गों द्वारा लागू की जा रही देशद्रोही, साम्राज्यवाद-परस्त व जनविरोधी नीतियों के खिलाफ सभी जनता एकत्रित होकर संघर्ष करें!

प्रिय कामरेडो!

कुल मिलाकर, साम्राज्यवादियों और उनके दलाल शासक वर्गों द्वारा विश्व भर में खास कर पिछड़े देशों में विकृत ''विकास दिशा'' को आगे लाया जा रहा है। इसके तहत भारतीय शोषक-शासक वर्गों का दावा है कि साम्राज्यवादी वित्तीय संस्थानओं के आर्थिक सहायता के साथ या बहुराष्ट्रीय कंपनियों के पूंजी निवेशों पर आधारित विभिन्न ''विकास परियोजनाओं'' को लागू करने के जरिए रोजगार और बाजार सुविधाएं बढ़ाकर लोगों की जीवन स्तर को बेहतर किया जा सकता है। साम्राज्यवादी बहुराष्ट्रीय कंपनियों व कार्पोरेट घरानों को परम मुनाफें दिलाने वाली और जनता के जिंदगियों से, खास कर मजदूर, किसान, दलित, आदिवासी, महिलाएं, धार्मिक अल्पसंख्यक और शहरी गरीब जनता के जिंदगियों से खेलकर उन्हें दूभर गरीबी में धकेलने वाली यह ''विकास दिशा'' कितनी झूठी है, किसी भी पिछड़े देश का जांच-पड़ताल करने से समझ सकते हैं। इस दिशा में 'विकास' और विस्थापन एक ही सिक्के के दो पहलु हैं। यानी यह बहुराष्ट्रीय कंपनियों को 'विकसित' कर, उत्पीड़ित जनता को विस्थापित करती है। उत्पीड़ित जनता के जीवन स्तर को 'विकसित करने' के बजाय नरक में ध केलती है।

इस ''विकास दिशा'' के अंदर ही कृषि संकट को हल करने के लिए, खासकर किसान के आत्महत्याओं को रोकने के लिए दलाल सरकारें बड़े पैमाने पर साम्राज्यवादी-प्रायोजित कृषि ऋण, फसल बीमा, ऋण माफी, नरेगा, फसलों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य की योजनाएं अमल कर रही हैं। सरकारी नियंत्रण और महालेखा परीक्षक (काग) ने अपने रिपोर्ट में स्पष्ट किया कि 1985 से 2015 तक फसल बीमा योजना विभिन्न कारणों से किस तरह विफल हो गयी है। 2016 के खरीफ खेती के समय में फसल बीमा योजना से बीमा कंपनियों ने ही बड़े पैमाने पर पैसा कमाया है। इससे यह योजना किस का प्रायोजित है, आसानी से समझ सकते हैं । दरअसल फसल बीमा के पैसे किसानों तक नहीं पहुंच पाने, बैंक ऋणों को चुकाने बैंकों के साथ-साथ वित्तीय कंपनियों द्वारा परेशान करने की वजह से किसान आत्महत्याएं कर रहे हैं। इस तरह बाजार

बड़े पैमाने पर नष्ट हो जाना, मुद्रास्फीति, एक तरफ खाना और कपड़े के अभाव से करोड़ों जनता गरीबी में डुब जाना, दूसरी तरफ अतिरिक्त माल-सामग्री को ध्वस्त किया जाना, असुरक्षा, पूरी अर्थव्यवस्था स्थगित हो जाना और उसमें अराजकता व्याप्त हो जाना - ये सभी साम्राज्यवाद का ही लक्षण है। परिणामस्वरूप पूंजीवादी उत्पादन व्यवस्था में औद्योगिक उत्पादन की क्षमता और विनिमय के बीच अंतर दिन ब दिन और उच्च स्तर तक पहुंच जाती है। किसी भी साम्राज्यवादी देश में गिरती उत्पादन की दर को फिर से बढ़ाकर स्थायी रोजगार पैदा करने के स्थिति में नहीं रहती है। यानी उत्पादन शक्तियां पूरी तौर पर इस्तेमाल कर सर्वोच्च स्तर पर उत्पादन करने की प्रक्रिया ही पूंजीवादी व्यवस्था में अस्तित्व में नहीं आती है। एक तरफ खाना और कपड़ा ढेर सारा होता है, दूसरी तरफ व्यापक श्रमिक जनसमुदाय खाना और कपड़ा के अभाव में दूभर गरीबी और भुखमरी का शिकार हो जाते हैं। इसलिए ही लेनिन ने सूत्रबद्ध किया कि साम्राज्यवाद एक जर्जर पूंजीवादी व्यवस्था है।

दोनों विश्व युद्धों में, विश्व के उत्पीड़ित राष्ट्रों और जनता के साथ-साथ हार का मुह देखने वाली और नुकसान उठाने वाली साम्राज्यवादी देशों को भी एक तरफ भारी विनाश झेलना पड़ा और दूसरी तरफ उसी मलबे को आधार बनाकर संपदाओं को इकट्ठा करने का इतिहास अमेरिकी साम्राज्यवादियों का रहा है। इससे 1950 में अमेरिकी सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) विश्व के कुल उत्पादन का लगभग आधा हिस्सा हो गया था।

उसी समय में पूंजीवाद के आम संकट को इस्तेमाल करते हुए पूर्वी यूरोप, चीन, उत्तरी वियतनाम और उत्तरी कोरिया पूँजी के जुए को उखाड़ फेंककर मुक्त हुआ और एक शक्तिशाली समाजवादी खेमा उभर आया। यह विश्व समाजवादी क्रान्ति को आगे बढ़ाने के लिए एक कारगर उपकरण बन गया। जैसा कि कामरेड स्तालिन ने चिह्नित किया है, एक ही सर्वग्राही विश्व बाजार का विघटन दूसरे विश्व युद्ध की सर्वाधिक महत्वपूर्ण आर्थिक परिणति रही थी।

1950 के दशक के मध्य तक सभी बड़ी साम्राज्यवादी शक्तियों ने साम्राज्यवादी खेमे के निर्विवाद नेता के रूप में उभर चुके अमरीकी साम्राज्यवाद की मदद से अपने अभावों की समस्या से उबरते हुए खुद को स्थिर कर लिया। इसके साथ-साथ क्रमशः वाणिज्यक क्षेत्र में अमेरिका से स्पर्धा लेते हुए विश्व बाजार में उसकी हिस्सा को घटाते आये। 50 के दशक के मध्य तक युद्ध से

पहले के उत्पादन स्तरों को पार करने के बाद इनकी अर्थव्यवस्थाओं ने अगले करीब दो दशकों तक तेजी से विस्तार किया। पूँजीवाद में आंशिक तौर पर स्थिरता रही।

लेकिन यह स्थायी तौर पर टिक नहीं पायी। 1973 में जैसे ही विश्व अर्थव्यवस्था में ठहराव का लम्बा दौर शुरू हुआ, अनवरत आर्थिक विस्तार का मिथक धराशायी हो गयी। यह संकट वियतनाम, कंपूचिया, लाओस तथा हिन्द-चीन की जनता के बहादुराना राष्ट्रीय मुक्ति युद्ध के हाथों अमरीकी साम्राज्यवाद का विध्वंसकारी पराजय और दुनिया के पुनर्विभाजन के लिए प्रतिद्वन्द्वी महाशक्ति के रूप में पूर्ववर्ती सोवियत सामाजिक साम्राज्यवाद के आविर्भाव की पृष्ठभूमि में इस सकंट सतह पर आ गया। इससे विश्व अर्थव्यवस्था की वृद्धि-दर पूरी तरह कम हो गयी है। अमरीका का सकल घरेलू उत्पाद सन् 2003 में इसका पाँचवाँ हिस्सा ही रह गया। इसी के अनुरूप 1970 के दशक के आरम्भ से लेकर डालर की विश्वव्यापी शक्ति असाधारण रूप से घटती चली गयी। 1984 तक आते-आते अमरीका पहले विश्व युद्ध के बाद पहली बार पूँजी का कुल आयात करनेवाला देश बन चुका था। लगभग सात दशकों तक विश्व का ऋणदाता बने रहने के बाद 1985 में उस पर 110 अरब डालर का विदेशी कर्ज का भार चढ़ा, जिससे वह दुनिया का सबसे बड़ा कर्जदार देश बन गया। अमरीका में चालू खाते का घाटा 1990 के दशक की शुरुआत में शून्य रहने के बाद सन् 2000 में 40 अरब डालर तक और सन् 2005 की शुरुआत में 750 अरब डालर तक जा पहुँचा। उसके बढ़ते केन्द्रीय बजट घाटे के दो सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक सामरिक खर्चे और कर्ज पर भुगतान हैं। इन दोनों की कुल राशि मिलकर अमरीका के संघीय बजट का 50 से 60 प्रतिशत तक पहुँचा। इस तरह अमेरिकी साम्राज्यवाद क्रमशः कमजोर हो जाने का प्रधान कारण वह एक युद्ध अर्थव्यवस्था के रूप में तब्दील हो जाना ही है।

पूँजीवादी व्यवस्था के अन्तर्निहित संकट और अन्तरविरोधों को हल करने में पूँजीवादी संकटों का कीन्सवादी समाधान और तथाकथित कल्याणकारी राज्य का अर्थशास्त्र बुरी तरह विफल हो चुका था। सरकार द्वारा बड़े पैमाने पर उधार लेते हुए और घाटे का वित्तीय प्रबन्धन करते हुए संकट से बाहर निकलने के लिए किये जा रहे व्यापक हस्तक्षेप व्यर्थ साबित हो रहे हैं। उसके उपरान्त, इसके बावजूद कि विश्व बाजार के साथ पूरी तरह आत्मसात हो जाने के साथ-साथ

को, जनता के दिलों-दिमाग को जीतने की कार्यनीति को इस्तेमाल करने के लिए सरकार के पास सूचनाएं उपलब्ध करवाने के लिए नीतिगत और शोध संस्थाओं का गठन किया है। दूसरी तरफ, स्माल आर्मस कंट्रोल (क्योंकि, माओवादियों के पास छोटे हथियार ही होते हैं), आईइडी वॉच, डिस-आर्मामेंट और शांति-वर्ता संबंधित संस्थाएं (किसी तरह माओवादियों को वार्तालाप में उतार कर उन्हें निरस्त्र करना इनका लक्ष्य है), युद्ध में बच्चों से संबंधित संगठन (ये बच्चों की दूभर स्थिति के लिए माओवादियों को जिम्मेदार ठहराते हैं), युद्ध में महिलाओं से संबंधित संगठन आदि शोध संस्थाएं भी मौजूद है। तीसरी तरफ, उन्होंने माओवादियों, जनता के विरोध प्रदर्शनों को नियंत्रित करने, इंटलिजेंस-रेकन्नाइसेंस-सरवाइलेंस संबंधित उपलब्ध ताजा टेक्नोलोजी के बारे में पुलिस, अर्धसैनिक बल और सेना को सूचनाएं उपलब्ध कराने वाली शोध संस्थाएं भी गठित किएं हैं।

भारत सरकार माओवादी आंदोलन के खिलाफ अमेरिका, इज्रायल, यूरोप से संबंधित काउंटर इंसर्जेन्सी विशेषज्ञों के सुझाओं को अमल कर रही है। इसलिए, क्रांतिकारी व जनवादी कार्यकर्ताओं ने दुनिया भर में काउंटर इंसर्जेन्सी ऑपरेशनों का (कश्मीर और उत्तर-पूर्व इलाकों सहित) लगातार गहराई से जांच-पड़ताल करना चाहिए। इसके आधार पर माओवादी इलाकों में भविष्य में होने वाले घटनाक्रम पर सही आकलन करना चाहिए। साम्राज्यवादी काउंटर इंसर्जेन्सी रणनीति और काउंटर गुरिल्ला ऑपरेशनों के खिलाफ सही जवाबी कार्यनीति तय कर अमल करना चाहिए। भारत में जनयुद्ध के समर्थन में पहले से ही देश-विदेशों में जारी भाईचारा आंदोलनों और जनयुद्ध पर साम्राज्यवादियों द्वारा अमल किए जाने वाली काउंटर-इंसर्जेन्सी कार्रवाइयों के खिलाफ जारी विरोध प्रदर्शनों को मजबूत व विस्तार करना चाहिए। इसी क्रम में उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं और उत्पीड़ित लोगों पर सभी क्षेत्रों में हो रहे साम्राज्यवादी हमलों के खिलाफ विभिन्न देशों में, विश्व भर में व्यापक संयुक्तमोर्चों गठित कर जन आंदोलनों को विकसित करना चाहिए।

आंदोलन का अध्ययन करने के लिए कई शोध/सलाह संस्थाएं-टीमें मौजूद हैं। आई.डी.एस.ए., सी.एल.ए.डब्लयु.एस., आई.पी.सी.एस., इंस्टिट्यूट फार कांफ्लिक्ट मेनेजमेंट जैसे कुछ महत्वपूर्ण संस्थाओं को सरकार द्वारा संचालित किया जा रहा है। इसके अलावा, एस.ए.टी.पी. एस.एस.पी.सी. (सोसाइटी फार स्टडी आफ पीस एंड कांफ्लिक्ट), और इस तरह की संस्थाएं हैं। विवेकानंदा (इंटलिजेंस) फाउंडेशन (अजित डोभल), इंडिया फाउंडेशन (उनके बेटे के अधीन है), अंबानी-निधियों से संचालित अब्जर्वर रीसर्च फाउंडेशन, एफ.आई.एन.एस., और इस तरह की कई संस्थाएं मौजूद है। ये संस्थाएं माओवादी आंदोलन को विशेष रूप से अध्ययन कर, युद्धतंत्र, नीतिगत विषयों पर कार्रवाइयों के बारे में सरकार को सलाह देती हैं।

सरकारी पुलिस, अर्धसैनिक बल और सैन्य संस्थाओं के अलावा ये भारतीय और विदेशी सुरक्षा संबंधित शोध और नीतिगत संस्थाएं (या बुद्धिजीवी समूह), भारत में और विदेशों में कई विश्वविद्यालय भी नक्सल/माओवादी मामले पर बहुत ही विविधातापूर्ण कोणों से बहुत ही रूचि रखते हुए शोध कर रही हैं।

केन्द्र व राज्य के पुलिस, खुफिया विभाग, अर्धसैनिक बल माओवादी छापामारों/नेताओं के गतिविधियों पर 24 घंटे निगरानी रखे हुए हैं। उसी समय में उक्त शोध संस्थाएं 24 घंटे विचारधारात्मक/रणनीतिक निगरानी कर रही हैं। अपने शोध पर आधारित होकर काउंटर इंसर्जेन्सी ऑपरेशानों, सिद्धांत, रणनीति-कार्यनीति संबंधित नीतिगत मामलों में सुधारों, बदलावों के बारे में सरकारों को सूचनाएं देती हैं। दूसरी विषय, चूंकि साम्राज्यवादी पुलिस, सेना या अर्धसैनिक बलों द्वारा प्राप्त रिपोर्टों तक ही सीमित न होकर जमीनी स्तर पर वस्तुगत विषयों को समझने के लिए उनके द्वारा अपनी स्वतंत्र शोध संस्थाएं गठित किए गए हैं।

ये भारतीय और विदेशी शोध संस्थाएं माओवादियों की हर एक कार्रवाई, घटना और हमला को, वह कितना भी छोटे क्यों न हो, भारत में कहीं पर घटित हो, रिकार्ड कर रही हैं।

विश्व भर में क्रांतियों का उन्मूलन करने के लिए उनके द्वारा गठित विभिन्न तरह के कई संस्थाओं को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उनका केन्द्रीकरण किस स्तर पर है। एक तरफ, उन्होंने काउंटर इंसर्जेन्सी रणनीति के तहत बलों

विश्व पूंजी के लिए पूर्वी यूरोप, सोवियत संघ और चीन की अर्थव्यवस्थाँ पूरी तरह खोल दी गयी, विश्व पूंजीवादी आर्थिक संकट की तीव्रता कोई खास कम नहीं हो पायी।

इस संकट को हल करने के लिए साम्राज्यवादी पूँजी को विश्व अर्थव्यवस्था की पुनर्रचना करने और पूँजी निवेश के अनुत्पादक तथा सटोरिया क्षेत्रों को तलाशने को बाध्य किया। 1970 के दशक के मध्य के बाद नव-उदारवादी अर्थशास्त्र या मुद्रा-केन्द्रित सिद्धान्त अन्तरराष्ट्रीय पूँजी के जुमले बन गये। उपग्रह के जरिये संचार-साधनों के विकास के फलस्वरूप सम्भव हुए सूचना-तकनोलाजी के अभूतपूर्व विकास ने सट्टेबाजी पूँजी के लिए राष्ट्रीय सीमाओं को चन्द सेकेण्डों में पार करना सम्भव बनाया है। इसके कारण 1980 के दशक के मध्य से लेकर, इस संकट की हल करने के लिए साम्राज्यवादियों ने वैश्वीकरण, निजीकरण और उदारीकरण (एल.पी.जी.) के माध्यम से दुनिया की जनता पर नया हमला बोला गया।

2008 में गृह ऋणों का बुलबुला फट जाने से अमेरिका में शुरू होने वाले तीव्र वित्तीय व आर्थिक संकट ने और विनाशकारी रूप ले लिया। बहुत तेजी से यूरोप और जापान को अपने चपेट में ले लिया जो अभी भी जारी है। इसने समूचे अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामंती देशों के अर्थव्यवस्थाओं पर भी विपरीत असर डाला। जी-20 के देश, मुख्य रूप से अमेरिका द्वारा बड़े पैमाने पर बेल-आउट की योजनाएं अपनाई गई। जनकल्याण योजनाओं पर कटौती कर या उन्हें रद्द कर जनता के कंधों पर संकट के बोझ थोपा गया। मजदूरों के श्रमशक्ति को और लूटने के लिए श्रम-तीव्रता बढ़ायी गयी। लाखों मजदूरों को काम से निकाला गया। परिणास्वरूप जनता के खरीदने की क्षमता कम हो गयी। यह फिर से संकट को तीव्र कर दिया। परिणामस्वरूप अमेरिका, यूरोप, जापान आदि की अर्थव्यवस्था बार-बार संकट में फंसते जा रहा है। इससे विश्व में निम्नांकित मौलिक अंतरविरोध दिन ब दिन तीव्र होता जा रहा है :

1. साम्राज्यवाद और उत्पीड़ित राष्ट्रों व जनता के बीच का अन्तरविरोध;
2. पूँजीवादी और साम्राज्यवादी देशों में पूँजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग के बीच का अन्तरविरोध;
3. साम्राज्यवादी देशों तथा इजारेदार पूँजीवादी ग्रुपों के बीच का अन्तरविरोध।

इन सभी अन्तरविरोधों में से साम्राज्यवाद और उत्पीड़ित राष्ट्रों तथा जनता के बीच का अन्तरविरोध प्रधान अन्तरविरोध है। यही अन्तरविरोध आज दूसरे अन्तरविरोधों को प्रभावित व निर्धारित कर रहा है।

पूँजीवाद के आम संकट के तीखे होते जाने के इसी परिप्रेक्ष्य में हमें विश्व राजनीति में हो रहे विराट परिवर्तनों का समझना होगा, विशेष कर सोवियत संघ का महाशक्ति की स्थिति से पतन तथा इसके राजनीतिक विघटन का, अमरीकी साम्राज्यवाद का कमजोर हो जाने का, नए तौर पर चीन एक सामाजिक साम्राज्यवादी शक्ति के रूप में उभर कर आने का और अन्तर-साम्राज्यवादी साठगाँठ तथा प्रतिद्वन्द्विता का, बढ़ते विश्वव्यापी फासीवादी हमले का, विश्व बाजार तथा संसाधनों पर एकछत्री नियन्त्रण कायम करने के लिए अमरीका के नेतृत्व में साम्राज्यवाद द्वारा छेड़े जाने वाले आक्रमणकारी युद्धों का, विश्व युद्ध के खतरे का और दुनिया भर में क्रान्तिकारी संघर्षों को विकसित करने के लिए अधिकाधिक अनुकूल होती परिस्थिति का।

विश्व क्रान्ति के तूफान-केन्द्र - एशिया, अफ्रीका, लातिन अमरीका

साम्राज्यवाद बेहद संकट में फंसे जाने के हर एक संदर्भ में उसने संकट को हल करने के लिए अपनी इस संकट के बोझ को एशिया, अफ्रिका और लातिन अमेरिका के पिछड़े देशों पर अपने शोषणकारी नीतियों को इन पर थोपता गया। 80 के दशक के मध्य से उसके द्वारा सामने लायी गयी एलपीजी नीतियों के तहत निजीकरण तथा उदारीकरण; सरकारी खर्चों में भारी कटौती; सब्सिडी की समाप्ति; ॠण लेने पर लगाम; अवमूल्यन; कर्ज की वसूली के बजाय उतने ही मूल्य के शेयर हासिल कर लेना; साम्राज्यवादी माल, सेवा तथा पूँजी की उन्मुक्त व निर्बाध आवाजाही; निर्यातोन्मुख रणनीति और इस प्रकार की अन्य जन-विरोधी नीतियों के माध्यम से स्वदेशी उद्योगों को व्यवस्थित रूप से खत्म किया जाने लगा। उत्पीड़ित देशों के मौजूदा उद्योगों को ''उत्पादन का वैश्वीकरण'' के तहत विश्वव्यापी कारखानों के तन्त्र का पुर्जा मात्र बना दिया जाने लगा। इससे इन देशों में अभूतपूर्व आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक संकट पैदा हो गया है। इससे इन देशों में लाखों मजदूर बेरोजगार बन गए। कई उद्योग बंद पड़ गए। साम्राज्यवादी इन देशों को आधुनिक तकनीक से वंचित करने के साथ-साथ, विभिन्न देशों की जनता की श्रमशक्ति और कच्चे माल का शोषण करते हुए तथा उन देशों में सस्ते में तैयार होने वाले औद्योगिक उत्पादों को कम दरों में

कोशिशें कर रही हैं। खासकर, भारतीय शासक वर्ग ने माओवादी पार्टी के नेतृत्व में जारी आंदोलन को पूरी तरह कुचलने के लक्ष्य से दोगुनी ध्यान केन्द्रित की हैं। इसका एक मुख्य कारण है, भारत सरकार हिंद महासागर में हो या कोई अन्य जगह में अपनी प्रभाव विस्तार करने के लिए, विस्तारवादी कांक्षा के साथ अपनी प्रभाव को बढ़ाने के लिए बाहरी (विदेशी) ऑपरेशनों में कश्मीर और माओवादी आंदोलन की वजह से अर्धसैनिक बल और सेना को तैनात नहीं कर पा रही है। वह ऐसा कर पाने से, अपनी विस्तारवादी कांक्षा को पूरा करते हुए साम्राज्यवादियों के हितों की मदद करने बाजारों की विस्तार जैसे कई हित हासिल हो सकते हैं। उसी समय में, चीन अपनी प्रभाव के दायरे को तेजी से विस्तारित करना भारत के लिए चिंता का विषय बन गया है। अगर चीन को अमेरिका साम्राज्यवादियों की मदद से नियंत्रण करना हो, तो भारत सरकार को निश्चित ही अपनी सशस्त्र बलों को बाहरी ऑपरेशनों के लिए तैनात करना होगा। लेकिन कश्मीर संघर्ष और माओवादी आंदोलन जब तक जिंदा रहेंगे एवं उसे चोट पहुंचाते रहेंगे तब तक भारत सरकार अपनी विस्तारवादी लक्ष्यों के लिए विदेशों में प्रत्याशित रूप से सेना को तैनात करना कठिन है।

लेकिन इन बगावतों और क्रांतियों को कुचलने में साम्राज्यवाद बहुत ही अनुभवी है। खास कर कम्युनिस्ट क्रांतियों के प्रति वह कोई भी नरम रूख नहीं अपनाती है। साम्राज्यवाद देश के माओवादी आंदोलन पर विभिन्न कोणों से लगातार जांच-पड़ताल कर रही है। उसने सरकारों, सेनाओं, बुद्धिजीवी समूहों, विश्वविद्यालयों, एनजीओ (गैरसरकारी संगठनों), सेना, पुलिस और अर्धसैनिक विभागों के साथ एक विशाल जाल को विकसित की हैं। इनके साथ जानकारियां साझा कर रही हैं। वे आपस में प्रशिक्षण प्राप्त कर रही हैं। उनके साथ मिलकर संयुक्त सेमिनार, जांच-पड़ताल एवं वर्कशाप संचालित कर रही हैं। वे माओवादियों के साथ व्यवहार करने के मामले में नीतियां तय करने में सरकारों को सलाह-सुझाव दे रही हैं।

भारत के शासक वर्गों ने माओवादी आंदोलन पर 24 घंटे और 365 दिन तेज निगाह रखने के लिए दर्जनों जांच-पड़ताल संस्थाओं को गठित किया है। विदेशी जांच संस्थाओं को साम्राज्यवादी पैसा उपलब्ध करा रहे हैं। उन्होंने भारत में बगावतों का अध्ययन करने उन्हें निर्देशित किया है। भारत में भी माओवादी

आदिवासी, धार्मिक अल्पसंख्यक, उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं के लोगों की जिंदगियों को दिन ब दिन और दूभर परिस्थितियों में धकेल रही है। इस के फलस्वरूप, उनके आंदोलनों और संघर्षों में तेजी आ रही है और यह सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ रही है।

इसी क्रम में कश्मीर और उत्तर-पूर्वी राष्ट्रीयाताओं के मुक्ति संघर्ष 1950 दशक से लम्बे समय से ही चल रही है और भारतीय शासक वर्गों के प्रति खतरा के रूप में बने हुए हैं। इसके साथ-साथ एक स्पष्ट क्रांतिकारी रणनीति-कार्यनीति एवं राजनीतिक-सैनिक दिशा (लाइन) के साथ कामरेड चारू मजुमदार के नेतृत्व में हुई नक्सलबाड़ी सशस्त्र किसान बगावत, उसके बाद श्रीकाकुलम, गोपीवल्लभपुर, बीरभूम, लखिमपुर-खेरी .... आदि एवं तत्कालीन एमसीसी के गठन के बाद सोनारपुर, कांकसा-बुदबुद ... आदि जगहों पर एक उभार देश भर में विस्तारित हुई थी। विभिन्न क्रांतिकारी धाराएं नक्सलबाड़ी की दिशा को ऊंचा उठाते हुए भाकपा (माओवादी) के रूप में एकता कायम करने के बाद, वर्तमान यह एकीकृत पार्टी ने अपनी नेतृत्व में देश में मजबूत सामंतवाद-साम्राज्यवाद-विरोध ी वर्ग संघर्ष को दीर्घकालीन लोकयुद्ध की दिशा में आगे बढ़ा रही है। इसके अलावा, देश में कई जगहों पर विभिन्न मजदूर, किसान आंदोलन, दलित आंदोलन, आदिवासी आंदोलन, धार्मिक अल्पसंख्यकों के आंदोलन, मानवाधि कार आंदोलन, महिला आंदोलन, पर्यावरण आंदोलन संचालित किया गया है। इसमें कुछ आंदोलन जुझारू रूप से आगे बढ़ने के बावजूद, सही लक्ष्य और नेतृत्व के अभाव के चलते बीच में रुक गयी हैं और कुछ आंदोलन विभिन्न रूपों में अभी भी जारी है। लेकिन इन सभी आंदोलनों ने किसी न किसी रूप में सामंतवादी-विरोधी व साम्राज्यवादी-विरोधी मांगों को सामने लायी हैं। वर्तमान साम्राज्यवाद का संकट तीव्र स्तर पर जारी रहने की परिप्रेक्ष्य में सभी उत्पीड़ित वर्ग, तबके एवं राष्ट्रीयताओं के आंदोलन विभिन्न रूपों में देश भर में विभिन्न स्तरों पर संचालित हो रही हैं। इन आंदोलनों को साम्राज्यवाद-विरोधी और सामंतवाद-विरोधी वर्ग संघर्ष के रूप में विकसित करने पर सर्वहारा के पार्टी द्वारा अपनी ध्यान को और केन्द्रित करना होगा।

माओवादी पार्टियों के मामले में, भारतीय शासक वर्ग और पूंजीवादी देश उस समस्या से जल्द से जल्द निजात पाने के लिए बहुत ही तीव्र रूप से

आयात करते हुए उनकी मनमानी लूट-खसोट कर रहे हैं। दूसरी ओर, साम्राज्यवादी देश भारी मशीनें, हथियार, विलासिता की वस्तुएं आदि तैयार कर इन देशों में बेचकर मनमाने मुनाफे बटोर रहे हैं। पिछड़े देशों को सब्सिडियों में कटौती करने पर दबाव बनाते हुए, अपने माल-सामग्री पर भारी सब्सिडियां उपलब्ध करा रहे हैं। परिणामस्वरूप, साम्राज्यवादी शक्तियाँ इन देशों के उद्योग, सेवा, व्यापार के क्षेत्रों में अपने निवेश से प्राप्त मुनाफे के रूप में; तकनोलाजी के स्थानान्तरण एवं रायल्टी के रूप में, इजारेदारी के बल पर दाम तय करते हुए, प्रतिभा-पलायन के रूप में और तमाम अन्य तरीकों से अपने यहाँ बेहिसाब दौलत लूट ले जा रहे हैं।

इस संकट से एशियाई टाइगरों के नाम से पुकारा गया इण्डोनेशिया, मलेशिया, थाईलैंड, सिंगापूर तथा और इससे पहले मेक्सिको, अर्जेण्टीना तथा लातिन अमरीका के अन्य देशों के सट्टे बाजारें भी धराशायी हो गयी है और इन अर्थव्यवस्थाओं में बड़ी उतल-पुथल मच गयी है। आज दुनिया के हर एक अर्थव्यवस्था में कृत्रिम ऋण आधारित विकास एक लक्षण सी बन गयी है। बेरोजगारी और मुद्रास्फीति इनकी अर्थव्यवस्था का स्थाई विशेषताएँ बन गयी हैं। उत्पीड़ित देशों में वास्तविक विकास गरीबी और कुपोषण के क्षेत्रों में ही हो रहा है। साम्राज्यवाद खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भर देशों को भी भीषण अकाल से पीड़ित ऐसे क्षेत्र में तब्दील कर दिये गये जो अपनी न्यूनतम जरूरतों के लिए भी आयात पर पूरी तरह निर्भर हों।

विश्व भर में 100 करोड़ लोग बेहद गरीबी और लम्बे समय से कुपोषण से जूझ रहे हैं। हर एक वर्ष करोड़ 70 लाख लोग गरीबी से अपनी जान गवां रहे हैं। इसमें से आधा बच्चे हैं। दुनिया की आबादी में से बहुत-ही गरीबी में जीने वालों में 75 फीसदी गरीब किसान ही हैं। साढ़े सात लाख (750 मिलियन) लोगों को साफ पानी उपलब्ध नहीं है। 20 फीसदी लोगों को विद्युत उपलब्ध नहीं है। सैकड़ों लाख (सैकड़ों मिलियन) लोग साम्राज्यवादी युद्धों, बलपूर्वक विस्थापन, संक्रमित बीमारियों, भूखमरी, बढ़ती बेरोजगारी से मुश्किलों का सामना कर रहे हैं। अफ्रीका में 10 में से 7 व्यक्ति आज कुपोषण का शिकार हैं। ब्राज़ील, इण्डोनेशिया और मेक्सिको में एक-तिहाई से भी ज्यादा लोग आज कुपोषण का शिकार हैं। तेल के धनी होने के बावजूद वेनेजुएला में 80 प्रतिशत लोग आज गरीबी-रेखा के नीचे जी रहे हैं। पेरू में केवल 25 प्रतिशत श्रम शक्ति

को ही रोजगार मिल पा रहा है और 83 प्रतिशत लोगों को पर्याप्त भोजन नहीं हासिल होता है। इससे इस पूंजीवादी व्यवस्था का क्रूर, शोषणकारी, उत्पीड़नकारी, अमानवीय, अन्यायपूर्ण स्वरूप बेनकाब ही हुआ है, जो महज दो जून की रोटी के लिए अपनी श्रमशक्ति बेचने को तैयार बैठे करोड़ो-करोड़ गरीबों को काम तक नहीं दे सकता, जो उत्पादक शक्तियों को नष्ट कर देता है और अपने विराट उत्पादन-तन्त्र को नाकाम किये रखता है - तब जबकि जनता की विशाल बहुसंख्या अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति न होने की स्थिति में बदहाली का जीवन जीने को मजबूर है।

सूचना तकनोलाजी पर अपनी सम्पूर्ण इजारेदारी के दम पर साम्राज्यवादियों ने एशिया, अफ्रीका तथा लातिन अमरीका के देशों पर इतने बड़े पैमाने पर आक्रामक सांस्कृतिक हमला बोल दिया है जिसका अतीत में कोई भी मिसाल नहीं है। मुट्ठीभर साम्राज्यवादी कम्पनियाँ वस्तुतः समूचे इलेक्ट्रानिक तथा प्रिण्ट मीडिया, इण्टरनेट और सूचना के अन्य सभी स्रोतों को नियन्त्रित किये हुए हैं, जिनसे दुनिया भर में साम्राज्यवाद द्वारा प्रायोजित कार्यक्रम, प्रचार और संस्कृति परोसी जा रही है। वैश्वीकरण की हमले के जरिए स्थानीय लोगों उपभोक्तावादी संस्कृति डुबाकर स्थानीय संस्कृतियों और तमाम राष्ट्रों की अर्थव्यवस्थाओं को भी बर्बाद किया जा रहा है।

उत्पीड़ित राष्ट्रों पर अपने आर्थिक संकट का बोझ डालकर साम्राज्यवाद ने इन देशों में सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक संकट ही नहीं, बल्कि पर्यावरण का संकट भी पैदा कर दिया है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के मुनाफे के तुच्छ अल्प-कालिक स्वार्थों के चलते पिछड़े देशों के ज्यादातर क्षेत्रों में जमीन, जल, वातावरण व जंगल दूषित हो चुका है; दक्षिण कोरिया में तेजाब की बरसात हुई है; भोपाल में जहरीली गैस काण्ड के तर्ज पर नरसंहार किये जा रहे हैं; साम्राज्यवादी देश उत्पीड़ित देशों के सागरों, नदियों व जंगलों में बड़े पैमाने पर घातक औद्योगिक कचरा फेंके जाने से बड़े पैमाने पर पौधे, जीव-जन्तु तथा समुद्री जीव नष्ट होते जा रहे हैं।

साम्राज्यवादी संस्थाओं के सक्रिय समर्थन एवं वित्तीय सहायता से एनजीओ (गैर-सरकारी संगठन) उत्पीड़ित देशों में अपना जाल फैला रहे हैं। सरकारें सोच-समझकर जन-कल्याणकारी योजनाओं पर खर्च कम करती जा रही हैं और बदले में एनजीओ को कल्याणकारी योजनाओं का दायित्व सौंपती जा रही हैं।

मोदी-अमितशाह-मोहन भागवत गुट के आह्वान के मुताबिक 'नवभारत निर्माण' के लिए घोषित लक्ष्य है - कचड़ा मुक्त 'स्वच्छ भारत', गरीबी का उन्मूलन कर 'विकसित भारत', भ्रष्टाचार-मुक्त, आतंकवाद से मुक्त, जातिवाद-धार्मिकवाद (fundamentalism) से मुक्त भारत को गठित करना। यह सिर्फ आम जनता को भ्रम में डालने के सिवाय और कुछ नहीं है। इस घोषित एजेंडा के पीछे छिपी हुई असली लक्ष्य यही है कि देश को साम्राज्यवाद, दलाल नौकरशाह पूंजीपति व बड़े सामंती वर्गों के हितों के लिए किसी तरह की अवरोध पैदा न हो - इस तरह की भारत का गठन करना और साम्राज्यवाद, दलाल नौकरशाह पूंजीपति व बड़े सामंती वर्गों की सत्ता को सुदृढ़ करना। एक तरफ अमेरिकी साम्राज्यवाद के प्रति दक्षिण एशियाई वफादार रूप में भारत को खड़ा कर चीन का मुकाबला करने द्वारा; दूसरी तरफ देश में उच्च-जातियों की प्रभुत्व को सुदृढ़ करने के लिए उत्पीड़ित जातियों, विशेषकर दलितों को कुचलने (उनकी भाषा में जातिवाद से मुक्त करने) द्वारा, धार्मिक अल्पसंख्यकों को दबाने (उनकी भाषा में धर्मिक कट्टरतावाद से मुक्त करने) द्वारा ब्राह्मणीय हिंदू फासीवाद को मजबूत करने द्वारा; साम्राज्यवाद, दलाल नौकरशाह पूंजीपति व बड़े सामंती वर्गों के खिलाफ वर्ग संघर्ष और सशस्त्र संघर्ष करने वाले माओवादियों को 'समाधान' रणनीति के तहत कुचलने द्वारा, कश्मीर, उत्तर-पूर्व राष्ट्रीय-मुक्ति आंदोलनों को कुचलने (उनकी भाषा में आतंकवाद से मुक्त करने) द्वारा 'हिंदू राष्ट्र' की स्थापना करना और देश में फासीवादी शासन को जारी रखना। इसीलिए देश के अंदर गरीबी, निरक्षरता, बीमारी, भुखमरी, किसान की आत्महत्याएं आदि सामाजिक आर्थिक समस्याओं से लोगों का ध्यान हटाने के लिए ब्राह्मणीय हिंदू धर्मोन्माद, कश्मीर मामले में पाकिस्तान के खिलाफ, सीमा समस्या पर चीन के खिलाफ युद्धोन्माद और अंधराष्ट्रवाद भड़का रहे है। इनका शिकार हुए बिना क्रांतिकारी व जनवादी शक्तियों को लोगों को राजनीतिक रूप से जागरूक करना होगा। बढ़ती हिंदू फासीवाद के खतरा के खिलाफ व्यापक आधार पर लोगों को गोलबंद कर मजबूत और जुझारू जन आंदोलन को निर्माण करने की जरूरत है।

कुल मिलाकर भारतीय शासक वर्गों की लक्ष्य जो भी हो, उनके द्वारा अमल की जा रही साम्राज्यवाद निर्देशित नीतियां देश में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संकट को तेज कर रही हैं। यह संकट भारत के लोगों के जीवन में, खास कर, किसान, मजदूर, शहरी गरीबी जनता, छात्र-युवा, महिला, दलित,

संघर्ष तथा अन्यान्य रूपों में राष्ट्रीयता के संघर्ष चल रहे हैं और आगे बढ़ रहे हैं। कश्मीरी, नागा, असमी और मणिपुरी समेत उत्तर-पूर्वी भारत की अन्यान्य राष्ट्रीयताओं के संघर्ष सशस्त्र संघर्ष का रूप अख्तियार करते हुए जारी हैं। इन उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं की जनता सिर्फ अपनी पहचान के लिए ही नहीं, बल्कि अपने अलग हो जाने के अधिकार और इसकी मांग सहित अपने आत्मनिर्णय के सम्मानजनक अधिकार को हासिल करने के न्यायोचित उद्देश्य के लिए भी लड़ रही है। भेदभाव से शिकार हुए विभिन्न राष्ट्रीयताओं और इलाकों की जनता बोडोलैंड, गोरखालैंड, विदर्भ जैसे राज्यों की स्थापना की मांग के लिए लड़ रही हैं। अलग राज्य निर्माण की मांग को लेकर संघर्ष के जरिए तेलंगाना राज्य की स्थापना होने के बावजूद जनता के जनवादी आकांक्षाएं पूरी नहीं हो पायी। इन राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलनों और अलग राज्य की स्थापना की मांग को लेकर संचालित आन्दोलनों को सैन्य ताकत के बूटों तले नृशंस दमन के लिए लाखों की संख्या में भारतीय सैन्य बल तैनात किये गये हैं। पिछले 25 सालों में कश्मीर में लगभग एक लाख जनता की हत्या की जा चुकी है। भारत-भूटान सीमा पर भूटानी सेना की मिली-भगत से भारतीय सेना ने अपने एक सैन्य-अभियान में उल्फा, केएलओ, बोडो आदि के सैकड़ों समर्थकों और कार्यकर्ताओं को मार डाला है। इसके बावजूद इन संघर्षों की धधकती आग को बुझाया नहीं जा सका है। इन सभी संघर्ष साम्राज्यवाद-सामंतवाद- विरोधी वर्ग संघर्ष का हिस्सा है।

देश की सत्ता को हथियाने वाली हिंदू फासीवादी मोदी-अमितशाह-मोहन भागवत गुट के नेतृत्व में दिन ब दिन हिंदू फासीवाद का खतरा बढ़ रहा है। जनता के अधिकार और जन आंदोलनों को कुचलने के लिए पहले ही कई क्रूर एवं फासीवादी कानून लाए गए थे। इनके साथ-साथ केन्द्र व विभिन्न राज्य सरकारों में सत्ता में काबिज होकर हिंदू फासीवादी 'नवभारत का निर्माण' के नाम पर 2022 तक देश को हिंदू राष्ट्र के रूप में तब्दील करने के लक्ष्य से हिंदू धर्मांधता को भड़काने की वजह से ऐसी परिस्थिति पैदा हो रही है कि ये फासीवादी जो बताते हैं, वहीं शासन है। कश्मीर को कम से कम नाम के वास्ते स्वायत्तता देने वाली 370 और 35ए अनुच्छेदों को भी रद्द करने, लम्बे समय से भारत में बसे रोहिंग्या मुसलमानों को भगाने, अयोध्या में राम मंदिर बनाने - एक शब्द में कहे तो, देश में ब्राह्मणीय हिंदू शासन को लागू करने के लिए साजिशें चल रही हैं।

इससे इन गैर-सरकारी संगठनों को अधिक अवसर मिलते जा रहे हैं। ये एनजीओ जनता में भ्रम पैदा करने की कोशिश करते हैं, उन्हें गुमराह करते हैं और इस तरह साम्राज्यवाद की मदद कर रहे हैं। लेकिन साम्राज्यवादियों के हाथों पिछड़े देशों के अन्धाधुन्ध शोषण और लूट-खसोट के खिलाफ व्यापक किस्म के जन आन्दोलन, राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष और सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में क्रान्तिकारी आन्दोलन जारी है। साम्राज्यवाद और उत्पीड़ित राष्ट्रों तथा दुनिया की जनता के बीच का अन्तरविरोध इन हालात में तीखा हो चुका है। एशियाई, अफ्रीकी और लातिन अमेरिकी देश विश्व समाजवादी क्रांति के तूफान-केन्द्र के रूप में बनी हुई है। यह दिन ब दिन साम्राज्यवाद और उत्पीड़ित राष्ट्रों तथा दुनिया की जनता के बीच के अन्तरविरोध को तीखा कर रहा है।

विश्व भर में क्रांति के लिए परिस्थितियां अनुकूल बनते जाने की पृष्ठभूमि में कुछ अनुकूल परिणति दिखाई पड़ रही है। उदाहरण के लिए, इस प्रचार को, जो समाजवादी खेमे और समाजवादी चीन के पतन के बाद से शुरू हुआ, लिया जा सकता है कि ''मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद अप्रासंगिक हो गया है और मौजूदा समस्याओं के समाधान के लिए इसे लागू नहीं किया जा सकता और समाजवाद से पूंजीवाद बेहतर है'' आदि प्रचार की धज्जियां फिलहाल उड़ रही हैं। ''पूंजीवाद मुर्दाबाद'', ''मार्क्सवाद का अध्ययन करो - 'पूंजी' ('पूंजी' कार्ल मार्क्स की प्रख्यात कृति है) का अध्ययन करो'' - आदि नारे यूरोप और अमेरिका में ज्यादा लोकप्रिय हो रहे हैं। इन देशों में 'पूंजी' और अन्य मार्क्सवादी-लेनिनवादी किताबें हजारों की संख्या में बिक रही हैं। भारत, फिलिप्पींस, तुर्की, ब्राज़ील और पेरू में मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद (मा-ले-मा) पर आधारित जनयुद्ध जारी हैं। खासकर फिलिप्पींस की कम्युनिस्ट पार्टी की अगुवाई में फिलिप्पींस में जारी जनयुद्ध आगे बढ़ रही है। हमारी पार्टी भाकपा (माओवादी) की अगुवाई में जारी जनयुद्ध, जोकि देश में भाड़े के सरकारी सशस्त्र बलों द्वारा क्रूर अत्याचारों, बर्बर आपरेशन ग्रीनहंट अभियान और दुश्मन द्वारा जनता पर छेड़े गए अन्यायपूर्ण युद्ध के बावजूद भी टेढ़े-मेढ़े रास्ते से आगे बढ़ रही है। कुछ ऐसे देश भी हैं जहां सच्चे कम्युनिस्ट शक्तियों ने खुद को संशोधनवादियों से अलग करने के बाद मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद पर आधारित कम्युनिस्ट पार्टियों का गठन करना शुरू किया है। कई देशों में नए तौर पर माओवादी पार्टियां और संस्थाओं का गठित होना, कुछ माओवादी पार्टियां कमजोर

स्थिति से फिर से मजबूत होते हुए, उनमें से कुछ पार्टियां जनयुद्धों और समाजवादी क्रांतियों को शुरू करने की तैयारियां करना, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर माओवादी पार्टियों के बीच एक मजबूत मंच – इंटरनेशनल – की तरह संगठन की जरूरत के बारे में चर्चा तेज हो जाना – ये सब विश्व सर्वहारा समाजवादी क्रांति की मदद करने और उसे आगे बढ़ाने के पहलुएं ही हैं।

लम्बे समय से फिलिस्तीन जनता अपनी भूभाग के लिए और अपनी राष्ट्रीय मुक्ति के लिए इज्रायली विस्तारवादी हमलों के खिलाफ संघर्ष दृढ़ता से जारी रखी है। एक तरफ फिलिस्तीन जनता बड़े पैमाने पर एकत्रित होकर संघर्ष कर रही है, दूसरी तरफ छापामार योद्धाएं इज्रायली दुराक्रमणकारियों पर रॉकेटों व बमों से हमले कर रहे हैं। हाल ही में फिलिस्तीन लड़ाकुओं के दो मुख्य राजनीतिक गुटों द्वारा अपने मतभेदों को हल कर संयुक्तमोर्चा का गठित करना एक अनुकूल परिणाम है। अमेरिका द्वारा यरूसलम को इज्रायली राजधानी के रूप में मान्यता देने के खिलाफ विश्व भर में तीव्र निंदा हुई है।

2006 में लेबनान की जनता के हाथों हिजबुल्ला के नेतृत्व में 33 दिन के युद्ध में इज्रायली बलों पर जवाबी चोट पहुंचाने से उनकी शर्मनाक हार विश्व भर में साम्राज्यवादी विरोधी जनता को उत्साहित किया।

इराक में अमेरिकी पाशविक सैनिक और वैमानिक हमलों के खिलाफ लम्बे समय से जनप्रतिरोध जारी है। इस प्रतिरोध के परिणास्वरूप अमेरिका अपने सेनाओं को वहां से हटाने को मजबूर हुआ। लेकिन इसके बाद भी अमेरिका वहां की अपनी पिछलग्गू सरकार को इस्तेमाल कर इराक में अपनी हितों को पूरा करने के लिए साजिशें करते हुए अपनी पाशविक सैनिक हमलों को जारी रखा है। इसके कारण वहां का जन प्रतिरोध अस्थायी तौर पर कमजोर होने के बावजूद अमेरिकी साम्राज्यवादी लूट और हस्तक्षेप एवं उसकी दलाल सरकार के खिलाफ जनता की विरोध प्रदर्शन और प्रतिरोध जारी है।

अफगानिस्तान में लड़ाकुओं के प्रतिरोध कार्रवाइयां बढ़ना और समूचे अफगानिस्तान में विस्तारित हो जाना अमेरिकी साम्राज्यवादियों के लिए चिंता की बात बनी हुई है। इसलिए डोनाल्ड ट्रम्प सत्ता में आने के तुरंत बाद सिरिया और अफगानिस्तान में अमेरिकी सेनाओं के तादाद को बढ़ाकर वहां हमलों को तेज किया है।

पर उत्पीड़न झेलने वाले मुसलमान और दलित इसाइयों एवं अतिपिछड़े जातियों के लोगों द्वारा पर्याप्त आरक्षण की सुविधा के लिए लम्बे समय से संचालित आंदोलनों को समर्थन करना चाहिए। हमें बताना चाहिए कि आर्थिक तौर पर गंभीर समस्याएं होने के बावजूद, सामाजिक तौर पर न पिछड़ने वाले जातियों – राजस्थान में गुज्जर, आंध्र प्रदेश में कापु, गुजरात में पाटीदार, हरियाणा में जाट, महाराष्ट्र में मराठा लोगों का आरक्षण के मांग को लेकर चलाए जाने वाले आंदोलन सही नहीं है। केन्द्र व राज्य सरकारों के साम्राज्यवाद–परस्त नीतियों के खिलाफ आंदोलनों में उन्हें संगठित करना चाहिए। यहां इसे याद करना लाजिम है कि शासक वर्गों ने इस आरक्षण को इस तरह इस्तेमाल किया कि उत्पीड़ित लोगों को व्यवस्था में बदलाव के लिए सामाजिक क्रांतियों की तरफ जाने से उन्हें भटका दिया जाये; सामाजिक तौर पर पिछड़े जातियों के निम्नपूंजीपति वर्ग में स्थिरता लाने, उसमें एक छोटे होने से भी प्रतिष्ठा होने वाले तबके को पैदाकर उसे अपने वर्ग में शामिल किया जाय। इसलिए, दलित आदि उत्पीड़ित जातियों और उत्पीड़ित वर्गों के लोगों को आरक्षण की सीमितताओं के बारे में, सामाजिक पिछड़ेपन, जाति उत्पीड़न और वर्ग उत्पीड़िन के मूल कारणों के बारे में सोच कर, इस दूभर स्थिति से स्थायी तौर पर बाहर आने के लिए फौरी और दीर्घकालीन कार्यक्रम और सही दिशा (लाइन) अपनाना चाहिए। सामंतवाद–साम्राज्यवाद–विरोधी आंदोलनों में हिस्सा लेकर ही अपनी लक्ष्या की तरफ वे आगे बढ़ सकते हैं।

राष्ट्रीय समस्या : भारत में चीन की तरह और रूस की भी तरह कोई एक राष्ट्रीयता ऐसी नहीं है जो समग्र तौर पर वर्चस्व की स्थिति में हो। इसके अलावा यहाँ की राष्ट्रीयताएँ अपने विकास के विभिन्न चरणों से होकर गुजर रही हैं। भारत की वर्तमान सीमाओं का निर्धारण ब्रिटिश साम्राज्यवाद ने किया था। यहाँ की वर्तमान ''एकता'' स्वेच्छाचारी केन्द्रीय प्रभुसत्ता के अधीन तमाम जनता और राष्ट्रीयताओं के दमन पर आधारित है। इसी वजह से यह असमान और प्रतिक्रियावादी ''एकता'' को उत्पीड़ित राष्ट्रीयताएं और इलाकें विरोध कर रहे हैं। भारत में भी साम्राज्यवाद के ताबेदार भारतीय शासक वर्गों ने 'राष्ट्रीय एकता व अखण्डता' के नाम पर भारत को राष्ट्रीयताओं के कारागार में बदल डाला है। साम्राज्यवादियों के दिशानिर्देशन में भारतीय शासक वर्गों की विस्तारवादी रणनीति का यह एक हिस्सा है। इस परिप्रेक्ष्य में आज भारत के विभिन्न भागों में सशस्त्र

ार्मिक अल्पसंख्यकों को, खास कर मुसलमान जनता को बलि का बकरा बनाते हुए धार्मिक बहुसंख्यकों में उन्माद को बढ़ावा देना, इसके जरिए साम्राज्यवादियों और उनके दलालों के हितों को पूरा करना हिंदू फासिवादियों का सुव्यवस्थित और सामग्रिक नीति है।

मुसलमान समुदाय के विषय में सच्चर कमेटी की रिपोर्ट और उसकी सिफारिशों के जारी होने पर मुसलमान समुदाय के पिछड़ेपन का सवाल और उसमें सुधार लाने की आवश्यकता सामने आयी है। यह देश में धार्मिक अल्पसंख्यकों की दूभर स्थिति को उजागर करती है। बाबरी मसजिद के मामले में न्यायालयों द्वारा अपनायी गयी लालफिताशाही (red tapism) रवैया इस देश की व्यवस्था पर हिंदुत्व विचारधारा का दबदबा, उसकी झूठी धर्मनिरपेक्षता को ही दर्शाता है। एक तरफ 'मेक इन इंडिया' नाम पर बड़े पैमाने पर विदेशी साम्राज्यवादियों के निवेशों का आह्वानित करते हुए, देश को साम्राज्यवादियों से लुटवाने के लिए मोदी द्वारा अमल की जा रही नीतियों, दूसरी तरफ देश में मोदी के नेतृत्व में संघ परिवार द्वारा भड़काये जाने वाली हिंदू फासीवाद के बीच अविभाज्य संबंध है। इसका भण्डाफोड़ करते हुए व्यापक जनसमुदायों में बड़े पैमाने पर प्रचार अभियान संचालित करने की आवश्यकता है। पहले से ही हिंदू फासीवाद के खिलाफ मुसलमान, दलित, इसाई, आदिवासी आदि विभिन्न तरीकों से संगठित होकर आंदोलन चला रहे हैं। इसे प्रचारित करने की आवश्यकता है कि ये सभी आंदोलन साम्राज्यवाद व सामंतवाद विरोधी आंदोलन का हिस्सा है।

आरक्षण : जब देश को अर्धसामंती व्यवस्था के रूप में रोके रखते हैं, तब तक वह सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक तौर पर पिछड़पन झेलती रहेगी। ऐसा होना साम्राज्यवादियों और भारतीय दलाल शासक वर्गों के लिए जरूरी है। लेकिन उत्पीड़ित जातियों के लोगों ने अपनी जिंदगियां बदलने के लिए लम्बे समय से आंदोलन करने के वजह से आरक्षण को लाने में शासक वर्ग मजबूर हुए हैं। इस आरक्षण की सुविधा के वजह किसी न किसी स्तर पर उत्पीड़ित जातियों के लोगों को लाभ मिला है। इसलिए हमने आरक्षण को समर्थन करना चाहिए। आरक्षण को बचाने के लिए उत्पीड़ित जातियों के समर्थन में आंदोलन संचालित करना चाहिए। इस संदर्भ में सामाजिक और आर्थिक तौर

म्यांमार में रोहिग्या मुसलमान अपनी राष्ट्र की मुक्ति के लिए लम्बे समय से लड़ रहे हैं। चीनी सामाजिक साम्राज्यवादियों के बल पर वहां के बौद्धधर्मी सैनिक तानाशाह शासक वर्ग इस संघर्ष को लोहे की पैर से कुचल रहे हैं। अगस्त और सितम्बर 2017 में वहां के बौद्धधर्मी फासीवादी सेना और प्रतिक्रियावादी बौद्धवादी गुण्डें मिल कर रोहिग्या मुसलमानों पर क्रूर और अमानवीय हत्याकांड और महिलाओं पर घिनौने अत्याचार किए। इसके खिलाफ विश्व भर में तीव्र विरोध प्रदर्शन हुए हैं।

जनवरी 2018 में कुर्द राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष तेज हो गयी है। तुर्की सैनिक और हवाई हमलों को मुकाबला करते हुए कुर्द जनता और लड़ाकें शानदार तरीके से संघर्ष कर रहे हैं।

संकट में फंसने वाली साम्राज्यवादी देशों के सरकारी नीतियों के खिलाफ यूरोपीय महाद्वीप के कई इलाकें आजादी और विशेष पहचान की मांग को लेकर संघर्ष कर रही हैं। दिसंबर 2017 में हुई जनमत संग्रह में स्पेन से केटालोनिया इलाका अलग होने की मांग को समर्थन करते जनता अपनी फैसला सुनाई। कई वर्षों से इसी रास्ते पर इटली के वेनीटो, सार्डिनिया; स्पेन के बास्क कंट्री; ब्रिटैन के स्कटलैंड और वेल्स; डेन्मार्क के फरोये द्वीप; बेल्जियम के फ्लेमिश जैसे इलाके संघर्ष कर रही हैं।

लातिन अमेरिकी महाद्वीप में आर्थिक संकट और अमेरिकी अनुकूल सरकारों द्वारा लागू नयी उदारवादी नीतियों के परिणामों के खिलाफ श्रमजीवि जनता और मध्यम वर्ग जनता संघर्ष कर रही हैं। वेनेजुएला में चावेज समाजवाद की नमूना विफल हुई। यह देश के आर्थिक और राजनीतिक संकट की तीव्रता का प्रतिबिम्बित करती है। उसने विश्व भर में साम्राज्यवाद-विरोधी राजनीतिक संघर्षों के लिए वातावरण और अनुकूल बनाने में मदद दी।

एक तरफ साम्राज्यवादी देशों के पास, विशेष कर अमेरिका के पास कई बार इस धरती को ध्वस्त करने की क्षमता रखने वाली परमाणु बम है, दूसरी तरफ परमाणु बम बनाने का आरोप लगा कर उत्तर कोरिया और इरान पर युद्ध थोपने की भड़काऊ नीति अपना रही है। इसके बावजूद रूस और चीन के मदद से उत्तर कोरिया अपना प्रतिरक्षक कार्रवाई कर रही है। अमेरिकी साम्राज्यवाद को चुनौती देना तथा उसका विरोध करना जारी रखी हुई है। इराक में बढ़ती

बेरोजगारी, भ्रष्टाचार और सरकारी दमन के खिलाफ उभरी जन आंदोलन में युद्धोन्माद से अमेरिकी खुले तौर पर और बेशर्मी से हस्तक्षेप के खिलाफ विश्व भर में जनता तीव्र निंदा कर रही हैं।

सर्वहारा आन्दोलनों तथा जन आन्दोलनों का फिर से उभरना

पूँजीपति वर्ग अपने मुनाफे की गिरती दर को रोकने के लिए और अपने संकट के बोझ मजदूर वर्ग की पीठ पर लादने के लिए विभिन्न साधनों का सहारा लेते रहे हैं। इनमें शामिल हैं – श्रम शक्ति के एक हिस्से की छँटनी करके लागत कम करने के लिए कम्पनियों का विलय करना और काम की रफ़्तार तेज करने के जरिए श्रम की उत्पादकता बढ़ाना; कम मुनाफा देने वाले उद्योगों को बन्द करना; अन्ततः पूरी की पूरी या आंशिक तौर पर उत्पादन इकाइयों को ही कम मजदूरी वाले क्षेत्रों में स्थानान्तरित कर देना और इस प्रकार पिछड़े देशों के सस्ते श्रम का शोषण करने के साथ-साथ अपने देश में मजदूरों के शोषण की दर को भी तेज कर देना। इस तरह का पुनर्गठन करते हुए इजारेदार पूँजीपति वर्ग उपलब्ध श्रम की एक विशाल आरक्षित कतार तैयार करके मजदूरों में रोजगार के प्रति भारी असुरक्षा पैदा कर देते हैं। और इस तरह वास्तविक मजदूरी को दयनीय स्तर तक ले जाते हैं। उदाहरण के लिए यह अनुमान है कि अमेरिका की कंपनियां पिछड़े देशों के कम वेतन वाले क्षेत्रों में नौकरियों को स्थानान्तरित कर वेतन के मद में 150 अरब डालर की बचत कर पा रहे हैं।

अमेरिका के ज्यादातर प्रदेशाकें में भारी घाटा चल रहा है और अधिकांश कल्याणकारी योजनाएँ बन्द की जा चुकी हैं। फलस्वरूप अमेरिका में काले और अन्य अश्वेत लोगों पर सबसे ज्यादा मार पड़ रही है। शहरों के अन्दरूनी इलाकों की झोपड़पट्टियों की संख्या बढ़ रही है। मध्यम वर्ग के लोगों का जीवन-स्तर भी तेजी के साथ गिरता जा रहा है। ठेके पर श्रम और अंशकालिक तथा अस्थाई नौकरी आज सभी औद्योगिक देशों की विशिष्टता बन चुकी है। यह अनुमान है कि अमेरिकी कंपनियां इन साधनों से 300 अरब डालर तक बचत कर लेते हैं।

पूँजीवादी देशों में धनी और गरीब के बीच विषमताएँ आज जितनी गहरी हो चुकी हैं उतनी पहले कभी नहीं रहीं। ऊपरी एक प्रतिशत अमेरिकी परिवारों के पास राष्ट्रीय सम्पत्ति का जितना बड़ा हिस्सा आज है, उतना भी इस सदी में पहले कभी नहीं रहा। अमरीका में 40 प्रतिशत निचले तबके के पास जितनी

परिप्रेक्ष्य में 'घर वापसी' नाम पर आदिवासियों को हिंदू धर्म में जबरन शामिल करने जैसे हमले हो रहे हैं।

धार्मिक अल्पसंख्यकों की समस्या : भारतीय शासक वर्ग और उनके साम्राज्यवादी आका, विशेष कर अमेरिकी साम्राज्यवादी, जातिगत और साम्प्रदायिक उन्माद, खास कर हिन्दू फासीवाद को बल देते हैं, उसे उकसाते और भड़काते हैं। चूंकि वे अपनी विश्वसनीयता लगातार खोते जा रहे हैं, अतः वे यह मानकर ''बाँटो और राज करो'' की ब्रिटिश साम्राज्यवादियों की नीति लागू करने में लगे हैं कि जनता को आपस में लड़ाकर उनसे एक-दूसरे का गला कटवाया जाये। यही कारण है कि वे आरएसएस, विश्व हिंदू परिषद, बजरंग दल, शिवसेना, हिंदू जन जागृति, गोरक्षक जैसे उन खुलेआम ब्राह्मणवादी हिंदू फासीवादी, प्रतिक्रान्तिकारी गिरोहों को खड़ा करके उकसावा दे रहे हैं। भारतीय शासक वर्ग बहुत ही साजिशपूर्ण तरीके से एक योजना के तहत देश विभाजन के संदर्भ में, इंदिरा गांध ी की हत्या के संदर्भ में, गुजरात में गोधरा घटना, और इस तरह की कई संदर्भों में मुसलमानों पर, सिखों पर बड़े पैमाने पर अमानवीय और क्रूर हत्याकांडों को अंजाम देने, बाबरी मसजिद को ढहाने की घटना को अंजाम देने द्वारा हिंदू, मुस्लिम और सिखों के बीच कभी नहीं बुझने वाली आग सुलगा दिया है। वे समाज को धर्म के आधार पर पूरी तरह विभाजित करने की कोशिश कर रहे हैं। जगजाहिर है कि इसी क्रम में ही भारत के विशाल बाजार पर अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए साम्राज्यवादियों ने एक योजना के तहत हिंदू फासीवादी मोदी को सत्ता में लाए हैं। मुसलमानों और दलितों को गो-मांस खाने, बेचने, गोवध करने के बहाने सामूहिक रूप में हमले कर हत्याकाण्ड (mass lynching) कर रहे हैं। 'लव जिहाद', 'घर वापसी' के नाम पर धार्मिक अल्पसंख्यकों पर सांस्कृतिक हमले हो रहे हैं। जो लोग 'वंदेमातरम' गीत नहीं गाते और भारत माता की जय का नारा नहीं देते, उनपर देशद्रोही का ठप्पा लगाकर हमले कर रहे हैं। गोवध पर भाजपा शासित सभी राज्यों में पहले से ही प्रतिबंध लगाया गया है। अभी इस समूचे देश में लागू करने जा रहे हैं। इन सभी कारनामों का विरोध जताने वाले प्रमुख जनवादियों और लेखक गोविंद पान्सरे, कल्बुर्गी, दभोल्कर, गौरी लंकेश आदि पर भी भगवा आतंकी हत्यारे गुटों द्वारा हमला करवा कर हत्या की गयी। इन फासीवादी शक्तियां मुसलमानों को पाकिस्तान भगाने की साजिश रच रहे हैं और खुलेआम घोषणा कर रहे हैं। ध

और शासक वर्ग की विभिन्न पार्टियों द्वारा समर्थित सामन्ती शक्तियों की निजी सेनाएँ भी उत्पीड़न के अत्यन्त जघण्य तरीके के रूप में इस हथियार का इस्तेमाल कर रही हैं।

सामंतवादी-साम्राज्यवादी संस्कृति : भारत में साम्राज्यवाद-परस्त संस्कृति, और उपभोक्तावादी संस्कृति बेरोकटोक बढ़ते जाने के कारण मूलतः देशभक्ति के मूल्यों को नष्ट कर देती है। सामन्ती संस्कृति मुख्यतः संस्कारगत श्रेष्ठताबोध की ब्राह्मणवादी जाति-आधारित संस्कृति है। यह ब्राह्मणवादी संस्कृति सामाजिक मेल-जोल तथा सोच-विचार के प्रायः सभी पहलुओं पर अपनी छाप छोड़ती है – श्रम के प्रति, महिलाओं के प्रति, उत्पीड़ित जातियों के प्रति, अन्य समुदायों के प्रति दृष्टिकोण से लेकर विवाह के मानदण्डों, जन्म, मृत्यु, भाषा इत्यादि तक और असंख्य जातिगत प्रतीकों तक। पर विडम्बना यह है कि तथाकथित आधुनिक साम्राज्यवादी संस्कृति वर्चस्व-केन्द्रित है और यह प्रतिगामी ब्राह्मणवादी संस्कृति के साथ आसानी से तालमेल बिठा लेती है। यह क्रांतिकारी व नवजनवादी संस्कृति की वृद्धि के लिए रुकावट बन जाती है।

आदिवासी समस्या : आबादी के 8 प्रतिशत से अधिक तादाद में आदिवासी भारत के सबसे ज्यादा उत्पीड़ित एवं शोषित लोग हैं। जमींदार, ठेकेदार, व्यापारी, सरकार आदि आदिवासियों का शोषण करते हैं। इनकी भाषा, संस्कृति और विरासत पर भी हमले होते हैं। इसके अलावा विकास के नाम पर इन्हें अपनी मूलवासी इलाकों से और जमीन से लगातार बेदखल किया जाता रहा है और या तो पलायन के लिए और इनमें से कुछ लोगों को बसने के लिए सर्वाधिक प्रतिकूल क्षेत्रों में इन्हें जबरन पुनर्वास के लिए बाध्य किया जाता रहा है। अतीत में वनों की कटाई, बाँध निर्माण, बड़े उद्योग आदि परियोजनाओं के चलते आदिवासियों को विस्थापित किया जाता रहा है। अब साम्राज्यवादी पूँजी और दलाल नौकरशाही पूँजी जनजातीय लोगों को उनके क्षेत्रों में भारी मात्रा में मौजूद कच्चे माल और प्राकृतिक संसाधनों पर अपना कब्जा जमाने के लिए बेदखल करने लगी है। जनजातिय लोगों का विस्थापन और जमीन से बेदखली अखिल भारतीय महत्ता रखनेवाली एक ज्वलन्त समस्या बनती जा रही है। इस मुद्दे को गम्भीरता से उठाना जरूरी है। जिस तरह ब्रिटिश साम्राज्यवाद की शासन में इसाई धर्म को घुसाई गयी है, आज देश भर में हिंदू फासीवाद का दबदबा बढ़ने की

कुल सम्पत्ति है उससे कहीं ज्यादा सम्पत्ति दुनिया के सबसे धनी व्यक्ति माइक्रोसॉफ्ट के मालिक बिल गेट्स के ही पास है। जहाँ 1980 में व्यापार जगत के शीर्षस्थ अधिकारियों के वेतन और बोनस अमरीकी कारखानों के मजदूरों के औसत वेतन से 42 गुना ज्यादा थे। आज यह आँकड़ा 419 गुना तक पहुँच चुका है।

पूरे पश्चिमी यूरोप, जापान और अमेरिका में मजदूर जब अपनी नौकरी खोने के खतरे का सामना कर रहे हैं, तब भी वे छिने जा चुके अपने अधिकारों को फिर से हासिल करने के लिए आज ज्यादा जुझारू यूनियनों में संगठित हो रहे हैं। जर्मनी, फ्रांस तथा इंग्लैण्ड में मजदूरों तथा विभिन्न किस्म के कर्मचारियों – शिक्षकों, स्वास्थ्य कर्मियों, सार्वजनिक क्षेत्र के कर्मचारियों की बड़ी-बड़ी हड़तालें हो रही हैं। यूरोप और अमेरिका में दूसरे देशों से आ बसे अश्वेत मजदूरों के खिलाफ नस्लवादी तथा भेदभावपूर्ण नीतियों का प्रतिरोध भी बढ़ रहा है। अमेरिका में नस्लभेद के आधार पर राष्ट्रपति पद पर आसीन ट्रम्प के नीतियों के खिलाफ बीते वर्ष में अमेरिका के काले लोगों के साथ-साथ, श्वेत जाति के जनवादी शक्तियों और प्रवासी जनता ने लाखों की संख्या में सड़कों पर उतर कर जुझारू प्रदर्शन किए हैं। विशेषकर, अमेरिका को दुनिया में फिर से 'महान' बनाने के नाम पर लागू ट्रम्प की संरक्षणवाद नीतियों के खिलाफ, काले लोगों पर श्वेतजाति के नस्लवादी उन्मादों के हमलों के खिलाफ, मुस्लिम देशों के जनता पर लगाई गई प्रतिबंधों के खिलाफ, ब्रिटन, आस्ट्रेलिया, सिंगापुर आदि साम्राज्यवादी और पूंजीवादी देशों के भी प्रवासी जनता पर जारी नस्लवादी हमलों और लगाई गयी प्रतिबंधों के खिलाफ, उनसे तीव्र होती जा रही बेरोजगारी समस्या पर जनता के अंदर आक्रोश उमड़ रही है। फ्रांस, इटली आदि यूरोपीय देशों में राज्य के नस्लवादी नीतियों के खिलाफ गरीब प्रवासी मुस्लिम युवा और श्रमजीवि जनता बगावत कर रही हैं। पूर्वी यूरोप और पूर्ववर्ती सोवियत गणराज्यों (विशेषकर रूस एवं यूक्रेन) और चीन में निजीकरण, महँगाई, बेरोजगारी और मुक्त बाजार की नीतियों के खिलाफ मजदूर वर्ग के संघर्षों में तेजी आयी है।

सामाजिक-जनवाद और आधुनिक संशोधनवाद साम्राज्यवादी देशों और उत्पीड़ित देशों के मजदूर आन्दोलन की पाँतों के बीच अभी एक मजबूत ताकत के रूप में बनी हुई हैं। ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, इटली और स्पेन जैसे कुछ देशों में सामाजिक जनवादी शक्तियाँ सीधे-सीधे शासक वर्गों के प्रतिनिधि के रूप में

कार्यरत हैं। परन्तु पूँजीवाद के आम संकट के तीव्र होने और सस्ते श्रम का वैश्वीकरण हो जाने के कारण सामाजिक-जनवाद के पनपने का वस्तुगत आधार धीरे-धीरे कमजोर होता जा रहा है। ऐसी स्थिति में विकसित पूँजीवादी देशों में समाजवादी क्रान्ति की धारा और उत्पीड़ित देशों में नव जनवादी क्रान्ति की धारा की एकजुटता के लिए स्थितियाँ और ज्यादा अनुकूल हो उठी हैं।

पूँजीवादी देशों में मजदूर वर्ग सिर्फ अपनी वर्गीय मांगों पर ही नहीं, बल्कि साम्राज्यवादी वैश्वीकरण और युद्ध के खिलाफ भी जुझारू संघर्ष छेड़े हुए हैं। पूँजीवाद की अन्तिम विजय के बारे में प्रतिक्रियावादियों के अन्तहीन प्रचार के बावजूद विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक, अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष और जी-8 की शिखर-वार्ता के खिलाफ सिएटल, प्राग, वाशिंगटन, नीस, जेनोआ तथा अन्यान्य जगहों पर हुई विशाल जन गोलबन्दियों से यह दिखायी दे रहा है कि पूँजीवादी व्यवस्था के प्रति मजदूरों का मोहभंग बढ़ रहा है। इराक, अफगानिस्तान और सिरिया में अमरीका के नेतृत्व में जंग के खिलाफ दुनिया के पैमाने पर - वह भी ठीक पूँजीवाद के केन्द्र अमरीका तथा पश्चिमी यूरोप में ही दसियों लाख की तादाद में विरोध प्रदर्शनों से मजदूरों की अपनी विश्व-ऐतिहासिक भूमिका के प्रति बढ़ती जागरूकता जाहिर हो रही है।

साम्राज्यवादी शक्तियों के बीच साठगाँठ और प्रतिद्वंद्विता

1970 के दशक के आरम्भ में जब विश्व साम्राज्यवादी व्यवस्था का आम संकट तीव्र हो उठा, तभी से अमेरिकी महाशक्ति और पश्चिमी यूरोपीय तथा जापानी साम्राज्यवाद के बीच के अन्तरविरोध खुलकर सतह पर आने लगा। इनके ये आपसी अन्तरविरोध 1970 और 80 के दशकों में, विश्व पटल पर प्रतिद्वन्द्वी महाशक्ति के रूप में कायम सोवियत संघ का पतन हो जाने के बाद और ज्यादा तीखे हो उठे। समूची दुनिया में वास्तविक आय में हो रही समग्रिक गिरावट के परिणामस्वरूप मुनाफे की औसत दर की गिरावट और विश्व बाजार की लगभग ठहराव की स्थिति के कारण साम्राज्यवादी अन्तरविरोध आर्थिक क्षेत्र में तीखे होते जा रहे हैं।

यूरोपीय संघ (इ.यु.) में प्रमुख भूमिका निभाने वाली जर्मनी व फ्रांस अब विश्व राजनीति में एक शक्तिशाली ताकत के रूप में उभरा है और वह रूस की सीमा तक फैले विश्व के सबसे बड़े बाजार को विकसित करने के प्रयास में

ओर से घोर सामाजिक उत्पीड़न का सामना करते हैं। छुआछूत की अमानवीय प्रथा अभी भी जारी है और इसे टिकाये रखा जा रहा है। दलितों के साथ दूसरे दर्जे के नागरिकों जैसा व्यवहार होता है। आज भी उनमें से 90 से 95 प्रतिशत या तो भूमिहीन व गरीब किसान हैं या खेतिहर मजदूर। यानी सारतत्व में दलित समस्या वर्ग समस्या ही है।

दलितों को शासक वर्ग और उनके राज्यतन्त्र द्वारा संरक्षण-प्राप्त सामन्ती तथा ब्राह्मणीय हिन्दू धर्मोन्मादी शक्तियों के बर्बर आक्रमणों का शिकार होना पड़ रहा है। इसकी अभिव्यक्ति जनसंहारों, महिलाओं पर सामूहिक बलात्कारों और अंतहीन समाजिक भेदभाव व उत्पीड़न के रूप में हो रही है।

महिला समस्या : भारतीय समाज में पहले से ही ब्राह्मणीय हिंदू विचारधारा का दबदबा होने के कारण हमारे देश के आबादी में आधा हिस्सा रखने वाली महिलाएं साम्राज्यवादी-सामन्ती शोषण-उत्पीड़न झेलने के अलावा वे परिवार, धर्म, जाति व्यवस्था, सम्पत्ति के सम्बन्धों और संस्कृति के क्षेत्र में पितृसत्तात्मक संस्थाओं के बने रहने के कारण पुरुष प्रधानता तथा उत्पीड़न का शिकार हैं। ये घिनौनी परम्पराएँ, जैसे दहेज प्रथा, बाल विवाह, विधवा प्रथा, देवदासी प्रथा आदि मुख्यत: आज भी जारी हैं। खास कर साम्राज्यवाद-परस्त निजीकरण, भूमण्डलीकरण और उपभोक्तावाद के चलते महिलाओं पर यौन-उत्पीड़न व अन्य अत्याचार बढ़ रही हैं। महिलाओं की बराबरी की बात करने वाले तथाकथित संवैधानिक कानून ढकोसला साबित हो चुके हैं। महिलाओं की भागीदारी उत्पादन के क्षेत्रों में बढ़ी तो है, पर उन्हें कम मजदूरी मिलती है तथा कार्य-स्थल पर तमाम तरह की उत्पीड़न के साथ-साथ लिंग-आधारित पेशेगत असमानताओं को भी झेलना पड़ता है। साथ ही पितृसत्तात्मक विचारधारा के प्रभाव में महिलाओं के खिलाफ जारी भेदभाव के फलस्वरूप महिला-पुरुष अनुपात घटा है। साम्प्रदायिकता और कट्टरवाद को, खास कर हिन्दू कट्टरवाद को भड़काने की शासक वर्गों की कोशिशों ने महिलाओं की पीड़ा-व्यथा को और भी बढ़ा दिया है। अपने न्यायोचित अधिकारों के लिए उठ रही उनकी आवाजों को दबाने के लिए उनके खिलाफ बलात्कार को एक हथियार के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है। इस हथियार का इस्तेमाल राज्य भी विभिन्न संघर्षों में शामिल हो रही महिलाओं और जन आंदोलनों के दमन के अत्यन्त नीचतापूर्ण तरीके के बतौर कर रहा है। राज्य

सर्वहारा के नेतृत्व में चार वर्गों की संयुक्तमोर्चा में शामिल होकर नवजनवादी क्रांति के जरिए ही उन समस्याएं हल करने की रास्ता सुगम होती है। उनकी विभिन्न समस्याओं को विश्लेषण करने से यह विषय स्पष्ट हो जाती है। ऐसा ही हमारे देश में राष्ट्रीयताओं की समस्या की ठोस विकास की क्रम को ध्यान में रखकर पड़ताल करने से हम पाते हैं कि भारत के राष्ट्रीय स्वैछिक संघ के लिए सर्वहारा नेतृत्व में जारी भारत की नवजनवादी क्रांति की सफलता के साथ-ही राष्ट्रीयताओं की आकांक्षाएं पूरी हो सकती।

जाति समस्या : भारत में सामन्तवाद/अर्द्ध-सामन्तवाद का रूप परम्परागत यूरोपीय रूप जैसा ही नहीं है। यहां जातिगत उत्पीड़न मौजूदा अर्द्ध-सामन्ती, अर्द्ध-औपनिवेशिक व्यवस्था के साथ अविच्छिन्न रूप से गुँथा हुआ है। जाति व्यवस्था केवल अधिरचनात्मक परिघटना ही नहीं है, बल्कि आर्थिक आधार का भी हिस्सा है। जातिवाद और ब्राह्मणवाद सारत: अभिजातीय एवं अधिकारतान्त्रिक हैं और जन्म से ही अपने से निचली अन्य जातियों पर लोगों में श्रेष्ठता का बोध पैदा करते हैं – इन सारी चीजों को धर्म के नाम पर दैवी अनुमोदन मिल जाता है। चूंकि ब्राह्मणीय हिंदू विचारधारा साम्राज्यवाद छत्रछाया में पले-बढ़े भारतीय दलाल शासक वर्गों का विचारधारा है, यह उत्पीड़ित आवाम को उक्साने, उन्हें विभाजित करने के लिए भारतीय शासक वर्गों और साम्राज्यवादियों - दोनों द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाला एक खतरनाक हथियार है।

घिनौना जाति व्यवस्था और जातिवाद, जिसे देश के शासक वर्गों ने हजारों वर्षों तक जारी रखा है, सामाजिक उत्पीड़न और शोषण का एक विशिष्ट रूप है। जातिवाद व्यक्ति के आत्म-सम्मान को कुचल देता है, उसके साथ नीच जैसा व्यवहार करता है और एक ऐसा सीढ़ीनुमा सामाजिक उच्चश्रेणीक्रम (heirarchy) खड़ा कर देता है जिसमें ऊपरी पायदान पर स्थित हर तबका अपने नीचे वालों को नीचा समझता है। उत्पीड़ितों और गरीबों की बहुसंख्या वर्ग-उत्पीड़न के अलावा घोर जातिगत उत्पीड़न का भी शिकार है। साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और दलाल नौकरशाही पूँजीवाद के खिलाफ संचालित उनके वास्तविक संघर्षों को तोड़ने के लिए शासक वर्ग जातिवाद को इस्तेमाल कर रही है।

दलित इस जातिवादी सीढ़ी के सबसे निचले पायदान पर हैं जहाँ वे अपने ऊपर की सभी सामाजिक श्रेणियों की ओर से, खास कर सामन्ती शक्तियों की

है। समूचे यूरोप और अफ्रीका तथा दुनिया के अन्य हिस्सों में यूरोपीय संघ का आर्थिक स्वार्थ दिन ब दिन बढ़ते जा रहा है और इसका अमेरिका के साथ मेल नहीं है। रूस और चीन ने कुछ पश्चिम एशियाई देशों के साथ अमेरिका की घुसपैठ का मुकाबला करने की सरहद-सम्बन्धी सन्धियाँ कर ली हैं। लेकिन विश्व को हिलाकर रखने वाली आर्थिक संकट के कारण 2017 में इ.यु. से ब्रिटन अलग हो जाने के कारण (ब्रेग्जिट) जर्मनी, ब्रिटन और फ्रांस के बीच अंतरविरोध तीव्र स्तर पर पहुंच गयी हैं।

1970 के दशक के उत्तरार्द्ध से लेकर अमेरिका तथा अन्य देशों के साथ जापान का व्यापार-अधिशेष असाधारण रूप से बढ़ा है। 1980 के दशक में अमेरिका और जापान के बीच व्यापारिक युद्ध खास तौर से तीखा हो उठा है। 1980 के दशक के अन्त तक आते-आते जापान दुनिया का सबसे बड़ा निवेशक, ॠणदाता और सहायता-दाता देश बन गया। सेवा क्षेत्र तथा औद्योगिक क्षेत्र समेत दुनिया की 500 सबसे बड़ी कम्पनियों में दूसरा स्थान रखने वाला जापान अब अमरीका से थोड़ा ही पीछे है। जापान अमरीका के साथ अपनी साझेदारी पर निर्भरता बना हुआ है और पूर्वी एशियाई क्षेत्र में एक साम्राज्यवादी भूमिका कायम रखे हुए है। इसके बावजूद हाल ही में नए तौर पर सामाजिक साम्राज्यवाद के रूप में उभरने वाली चीन इस इलाके में अपने हितों का तथा प्रभाव का कदम-ब-कदम विस्तार करना अमेरिका और जापान - दोनों के लिए चुनौती बन गयी है।

अपने देश के विभिन्न राष्ट्रीयताओं और तीसरी दुनिया के राष्ट्रीय मुक्ति संघर्षों के उत्पीड़क के बतौर लगभग तीन दशकों तक प्रतिक्रियावाद का एक दुर्ग के रूप में काम करने के बाद 1990 तक आते-आते सोवियत संघ का महाशक्ति के स्थान से पतन के बाद वह अनेक सम्प्रभुता-प्राप्त गणराज्यों में विघटित हो गया। सोवियत संघ के चेहरे से समाजवाद का भ्रामक मुखौटा उतर चुका था। अनेक वर्षों तक इस समाजवादी मुखौटे के पीछे छिपे राजकीय इजारेदार पूँजीवाद, फासीवाद और रूसी अन्धराष्ट्रवाद अब अपने असली रूप में सामने आ रहे थे। प्रतिक्रियावादी पूँजीपतियों के इस अनवरत दुष्प्रचार के बावजूद कि सोवियत संघ के खात्मे के साथ साम्यवाद की मौत हो चुकी है, जागरूक विश्व सर्वहारा वर्ग तथा संघर्षशील जनता उत्तरोतर यह समझ पा रही है कि सोवियत संघ तथा पूर्वी यूरोप का संकट राजकीय नौकरशाह पूँजीवाद का संकट

था और जिसकी मौत हुई वह दरअसल छद्म साम्यवाद ही था।

पूर्ववर्ती सोवियत संघ के रौबदाब का वारिस रूस की आबादी पूर्ववर्ती सोवियत संघ से आधी रह गयी और अब उसके पास 92 प्रतिशत परमाणु हथियार, तीन-चौथाई प्राकृतिक संसाधन तथा विश्व का सबसे बड़ा तेल भण्डार भी रह गया है। उस समय अपना महाशक्ति का दर्जा खोने के बावजूद वह अभी एक मजबूत सैन्य शक्ति के रूप में और एक प्रतिद्वन्द्वी साम्राज्यवादी शक्ति के रूप में बना हुआ है। इसके बावजूद वह एक बेहद गहन आर्थिक तथा राजनीतिक संकट में फँस जाने के कारण पूर्वी यूरोप के उन देशों तथा अन्य उत्पीड़ित देशों पर पहले के अपना नियन्त्रण तथा वर्चस्व फिर से हासिल करने की स्थिति खो दिया है जो कभी सोवियत महाशक्ति की गिरफ्त में थे। लेकिन वह भारत जैसे देशों के साथ रक्षा सौदे व समझौते कर रहा है और क्रमशः आर्थिक और राजनीतिक तौर पर मजबूत होते हुए विश्व राजनीति में ज्यादा दमदार तरीके से अपनी दावेदारी पेश करने का प्रयास कर रहा है। अब वह एक उल्लेखनीय साम्राज्यवादी ताकत बन चुका है।

2010 से अमेरिका कुछ पूर्वी यूरोपीय देशों को और कुछ पुरानी सोवियत संघ के देशों को नाटो गठजोड़ में भर्ती कराकर रूस को परेशानी में डाल दिया। इसके बावजूद रूस अपनी अर्थ व्यवस्था को कुछ हद तक सुधार कर, अंतरराष्ट्रीय तौर पर अपनी आर्थिक और राजनीतिक हितों के लिए अमेरिका के साथ गंभीर संघर्ष में उतरी हुई है। इसके तहत अमेरिका के दलाल सरकारों के खिलाफ युक्रेइन में जनमत संग्रह करने की आड़ में युद्ध में उतर कर क्रायमिया को हथिया लिया। इसी तरह मध्य-पूर्व में अपनी हितों को बचाने के तहत सिरिया में राष्ट्रपति असद के पक्ष में अमेरिका-पोषित विद्रोहियों के खिलाफ युद्ध लड़ रही है। दूसरी तरफ शंघाई सहकारिता संगठन और ब्रिक्स गठजोड़ों में चीन के साथ मिलकर अमेरिका और नाटो गठजोड़ के खिलाफ रूस सैनिक तैयारियां कर रही है। यह सब अमेरिका और रूस के बीच तेज होती जा रही अंतरविरोध का ही प्रतिफलन है।

विश्व बाजार के लिए चल रही तीखी होड़ ने प्रमुख शक्तियों अमरीका, यूरोपीय संघ, रूस और जापान के बीच आर्थिक तथा राजनीतिक अन्तरविरोध तीखे कर दिये हैं। बहुत समय पहले ही यूरोपीय संघ का मुकाबला करते हुए अमेरिका ने कनाडा और मेक्सिको के साथ मिलकर 'उत्तरी-अमेरिका मुक्त

रहा है।

साम्राज्यवाद-निर्देशित नयी-उदारवादी आर्थिक नीतियों पर अमल के चलते देश के आर्थिक विकास को धक्का लगा है। मध्यम वर्ग ही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के एक उल्लेखनीय तबके की परिस्थिति सहित देश के लोगों की जीवन परिस्थिति बदतर हो गयी है। आबादी का 77 प्रतिशत गरीबी रेखा से नीचे जी रहा है। 2013 में जारी अर्जुन सेनगुप्ता कमेटी की रिपोर्ट से इसकी पुष्टि हुई थी। इसका मतलब यह है कि गरीबी रेखा के नीचे जी रही आबादी रोजाना 20 रुपए भी खर्च नहीं कर पाती। दूसरी ओर, अम्बानी बंधु, टाटा, बिड़ला, मित्तल, जिंदल, रुइया, जीएमआर आदि विश्व के अरबपतियों के जमात में शामिल हो गए हैं। इतना ही नहीं, हजारों संख्या में बड़े पूंजीपतियों के साथ-साथ, शासक पार्टियों के नेता, मंत्री, उच्च अधिकारी सैकड़ों, हजारों करोड़ रुपए स्विस बैंकों और अन्य विदेशी बैंकों में गुप्त रूप से जमा कर चुके हैं।

इससे आर्थिक असमानताएं और ज्यादा बढ़ रही है और गरीबों तथा अमीरों के बीच खाई और ज्यादा चौड़ी हो चुकी है। विशेषकर, 2014 में मोदी सरकार आने के बाद एक फीसदी धनी लोगों की संपत्ति 49 फीसदी बढ़ कर 2016 में 58.4 फीसदी हुई है। 2016 में देश के 10 फीसदी अत्यंत धनी लोगों के पास कुल संपत्ति 80.7 फीसदी तक पहुंच गयी। यानी बाकी 90 फीसदी लोगों के पास सिर्फ 19.3 फीसदी संपत्ति है। (क्रेडिट सोर्स ग्लोबल वेल्थ डेटा बेस से)।

हमारी देश अभी भी साम्राज्यवाद की गुलामी करने वाली अर्धऔपनिवेशिक और अर्धसामंती व्यवस्था के रूप में रहने के कारण, महिलाओं सहित हमारी सामाजिक व्यवस्था में बहुत-ही मुख्य सामाजिक तबकें के रूप में रहे दलित, आदिवासी और धार्मिक अल्पसंख्यकों पर वर्ग उत्पीड़न के साथ-साथ विभिन्न तरह के गैरआर्थिक उत्पीड़न भी दिन ब दिन तीव्र होता जा रहा है। इन तबकों के विशेष समस्याओं को विभिन्न बुर्जुआ, पेटीबुर्जुआ पार्टियां व संगठन हल नहीं कर सकती, विश्व में सबसे क्रांतिकारी वर्ग - सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में जारी सामाजिक क्रांति की सफलता से उनकी मुक्ति जुड़ी हुई है। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है। भारत की सामाजिक विकास के लिए रुकावट के रूप में रहे तीन बड़े पहाड़ - साम्राज्यवाद, सामंतवाद और दलाल नौकरशाही पूंजीवाद के खिलाफ

है। उद्योगों, खदानों और सेवा क्षेत्र में दिन ब दिन कर्मचारियों और मजदूरों की तादाद कम की जा रही है।

14 साल से कम आयु के 2 करोड़ से भी ज्यादा बच्चे अमानवीय हालात में काम कर रहे हैं। दुनिया के आधे से ज्यादा निरक्षर आज भारत में पाये जाते हैं। स्वास्थ्य, शिक्षा, परिवहन, पेयजल, सिंचाई और बिजली पर दी जाने वाली सब्सिडी को व्यवस्थित रूप से खत्म किया जा रहा है और लागत-वसूली के नाम पर झाँसा देने वाली योजनाएँ शुरू की जा रही है। विशेष आर्थिक ज़ोनों की बेरोटोक स्थापना होने के कारण, अधिकाधिक महिलाओं को काम की अमानवीय स्थितियों में धकेला जा रहा है, जहाँ उनका आर्थिक के साथ यौन शोषण भी होता है।

शासक वर्ग द्वारा लागू की जा रही साम्राज्यवाद द्वारा प्रायोजित नीतियाँ प्राकृतिक संसाधनों को बेहिसाब खर्च करने, पर्यावरण संरक्षण के मानदंडों को नजरअंदाज करने के कारण देश के हितों को भी नुकसान हो रहा है। पर्यावरण का संतुलन को खतरे में डाल दिया है। खतरनाक प्रदूषण फैलानेवाले उद्योगों, रासायनिक उद्योगों, भूमि, वायु, जल एवं मौसम को दूषित करने के कारण पर्यावरण को गंभीर नुकसान हो रहा है और जीव वातावरण का संकट पैदा कर रहा है। पेड़-पौधों तथा जानवरों-पक्षों के साथ ही मानव जीवन पर भी लगातार खतरा मँडरा रहा है।

साम्राज्यवादियों द्वारा ही निर्देशित नयी शिक्षा नीति के अनुसार सब्सिडी और अनुदान में कटौती के चलते शिक्षण-संस्थानों के उत्तरोत्तर निजीकरण का रास्ता साफ हो गया है। इस प्रक्रिया के फलस्वरूप पहले से ही आसमान छूती फीसों में और ज्यादा वृद्धि होते जाने के कारण शिक्षा लगातार महँगी होती जा रही है। इसके अलावा नयी नौकरियों पर पूर्ण रोक और निजीकरण के चलते दिन ब दिन बढ़ती बेरोजगारी, इनकी वजह से छात्रों-युवाओं के सामने भविष्य पूरी तरह अनिश्चित हो गया है। इस प्रकार शिक्षा को व्यापार बनाये जाने की बढ़ती रफ्तार समाज के कमजोर तबकों को शिक्षा से वंचित कर रही है। पहले से ब्राह्मणीय हिंदू विचारधारा से प्रभवित शिक्षा प्रणाली और शिक्षा संस्थान अबी हिंदू फासीवादी शक्तियां सत्ता पर काबिज होने के कारण शिक्षा और शिक्षा संस्थानों का भगवाकरण, शिक्षालयों में छात्राओं पर पितृसत्तात्मक पाबंदियां गंभीर रूप ले

व्यापार क्षेत्र' (नाफ्टा) बना लिया है। इसके बावजूद, ट्रम्प सत्ता पर काबिज होते ही अपने हितों के अनुरूप इस गठजोड़ का मानदण्ड को ही बदलने के लिए गंभीर कोशिशें कर रहे हैं। जापान बहुत समय पहले ही अस्ट्रेलिया के सहयोग से बनायी गयी अपेक (एशिया-प्रशांत आर्थिक सहयोग) को भी अपने हितों के अनुरूप बदलने के लिए कोशिशें कर रहे हैं।

संरक्षणवाद आज प्रायः सभी पूँजीवादी देशों की एक आम विशेषता बन चुकी है। कृषि तथा इस्पात के क्षेत्रों में दी जानेवाली सब्सिडी खास तौर से विवाद का मुद्दा बन गयी है। विश्व व्यापार संगठन (डब्लयु.टी.ओ.) साम्राज्यवादी वैश्वीकरण के 'द्वंद्व मानदंडों' का मंच बन गया। यानी साम्राज्यवादी देश खासकर अमेरिका शेष दुनिया को 'मुक्त व्यापार' का निर्देश देती रहती हैं, पिछड़े देशों से आने वाली माल-सामग्रियों पर आयात शुल्क लगाती हैं, उसी समय में अपने घरेलु बाजार की संरक्षण नीति को लागू कर रही हैं।

प्रमुख साम्राज्यवादी शक्तियों के अलावा चीन भी अपने यहाँ पूँजीवाद की पुनर्स्थापना के बाद विश्व राजनीति में एक और महत्वपूर्ण खिलाड़ी के रूप में उभर चुकी है। चीन एक नयी सामाजिक साम्राज्यवादी देश के तौर पर उभर कर साम्राज्यवादी व्यवस्था में मिलने के बाद विश्व में नए ध्रुवीकरण में तेजी आयी है। 30 लाख सैनिकों वाली अपनी सबसे बड़ी सेना और 12 लाख के अर्द्ध-सैनिक बलों के साथ चीन आज की दुनिया में एक प्रमुख सैन्य शक्ति बन गयी है। उसका सैन्य बजट आज विश्व में ही दूसरा सबसे बड़ा बजट है। उसने अपनी सेना के आधुनिकीकरण का कार्यक्रम बड़े पैमाने पर चलाया हुआ है। 2050 तक विश्व में अग्रणी सैन्य शक्ति के रूप में उभरने के लिए उसने हर वर्ष सात फीसदी तक सैन्य बजट को बढ़ा दिया है। चीन द्वारा अपने देश के मजदूर-किसान आदि उत्पीड़ित जनता के साथ-साथ दुनिया के जनता को, विशेषकर एशिया, अफ्रिका, लातिन अमेरिका के लोगों से लूटे गए परम इजारेदारी मुनाफें का भारी वित्तीय भण्डार विश्व पर अपनी वर्चश्व कायम रखने की उसकी रणनीति का मजबूत स्रोत बना हुआ है। समूचे स्प्रैटले ग्रुप के 250 टापुओं, प्रवाल भित्तियों (coral reefs) एवं प्रवालियों (atolls) पर चीन का दावा वहाँ के तेल और प्राकृतिक गैस के समृद्ध स्त्रोतों के चलते फिलिपीन्स, वियतनाम, मलेशिया, ताइवान तथा ब्रुनेई समेत पूर्वी एशिया के तमाम देशों के साथ झगड़े का कारण बन गया है। यह प्रशांत इलाके में एक चुनौती बनने के

कारण इन पूर्वी एशिया देशों का पक्ष को लेकर अमेरिका को चीन को रोकने के लिए प्रशांत इलाका-केन्द्रित रणनीति को तय की है। चीन अफ्रीका के कई देशों का शोषण और उत्पीड़िन करते हुए विभिन्न देशों का तथाकथित सम्प्रभुता के लिए खतरा बन गया है। वहां के प्राकृतिक संसाधनों को मनमर्जी से लूटने के कारण वह पहले से ही कई इलाकों में जनता का विरोध का सामना कर रही है। लगभग 20 से ज्यादा अरब देशों के प्राकृतिक संसाधनों और बाजारों को लूट रही है। एशिया में, विशेषकर दक्षिण, पश्चिम, दक्षिण-पूर्व, पूर्वी एशिया के देशों पर अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए भारी ''सिल्क रोड'' (वन बेल्ट-वन रोड) योजना के साथ विश्व पर अमेरिकी प्रभुत्व को चुनौती दे रही है। वह ''चीनी लक्षण-युक्त समाजवाद'' की शी जिनपिंग विचारधारा से विश्व के जनता को धोखा देने का नकाम कोशिश करते हुए क्रूर और अमानवीय पद्धतियों से अपनी साम्राज्यवादी शोषण जारी रखते हुए विश्व बाजार पर अपनी वर्चश्व कामय करने के लिए अमेरिका के साथ प्रतिस्पर्धा लेते हुए विश्व के जनता का दुश्मन बन गया है।

मध्य एशिया और पूर्वी यूरोप के इलाके अमेरिका, रूस-चीन के बीच कुत्तों की लड़ाई जैसी प्रतिस्पर्धा के केन्द्र बने हुए हैं। विशेषकर, इराक, सिरिया, कुर्द इलाके, यमन आदि खाड़ी देशों में जारी छापामार युद्धों को और जन आंदोलनों को अपने साम्राज्यवादी हितों को पूरा करने के लिए इस्तेमाल कर रही है। हमेशा वहां के संघर्षों को तोड़मरोड़ कर आपस में भिड़वाने, उसमें किसी एक पक्ष को लेकर सैनिक और हवाई हमले करते हुए उन इलाकों को कब्रिस्तानों में तब्दील कर रहे हैं।

इस प्रकार साम्राज्यवादी शक्तियाँ दुनिया के पुनर्विभाजन के लिए प्रतिद्वन्द्विता और गठजोड़ कायम रखते हुए उत्पीड़ित राष्ट्रों तथा जनता के संघर्षों का दमन करने के सवाल पर एकजुट हैं। यही कारण है कि विभिन्न साम्राज्यवादी शक्तियों के इस आपसी गठजोड़ को भी - जो कि अमेरिका के नेतृत्व में अफगानिस्तान, इराक, लिबिया, सिरिया आदि देशों पर बर्बर हमले चलाने के मामले में; उत्पीड़ित देशों पर ट्रिप्स, ट्रिम्स, गैट इत्यादि को जबरन लागू करवाने में (उसके बाद इन समझौतों को लेकर डब्लयु.टी.ओ. गठित किया गया); या फिर आईएमएफ, विश्व बैंक, एडीबी, मीगा, आईएफसी, आईडीए इत्यादि (जो केवल अमरीकी साम्राज्यवाद का ही नहीं, बल्कि समग्रता में अन्तरराष्ट्रीय पूँजी

कैजुअल व्यवस्था के अमानवीय हालात में ठेका मजदूरों की संख्या में बढ़ोत्तरी, मजदूरों व कर्मचारियों की भविष्य निधि की ब्याज दरों में कमी, बढ़ती बेरोजगारी, वेतनों में कटौतियां, सामाजिक सेवा कोष में कटौतियां या उनकी समाप्ति, वास्तविक वेतनों में गिरावट, करोड़ों खेतिहर मजदूरों और भूमिहीन व गरीब किसानों में रोजगार का अभाव, कर्ज का असहनीय बोझ के चलते लाखों किसानों की आत्महत्या, बजट में कृषि क्षेत्र की उपेक्षा, किसानों और झुग्गी-झोंपड़ियों में रहने वाले शहरी मेहनतकशों का व्यापक विस्थापन, अकाल व भूख के चलते मौतों में वृद्धि - इन सभी परिस्थितियों ने मजदूरों, किसानों और मेहनतकशों के जीवन को दूभर बना दिया है। जनता के स्वास्थ्य पर, खासकर माताओं और शिशुओं के स्वास्थ्य पर इस तेजी से बढ़ती महंगाई का बेहद बुरा असर पड़ रहा है। इसके फलस्वरूप, खून की कमी, कुपोषण, तपेदिक, मलेरिया, पीलिया आदि कई सामान्य बीमारियां गरीबों के लिए जानलेवा बीमारियां बनकर जान को नुकसान पहुंचा रहा है। खासकर शिशुओं, बच्चों और महिलाओं में असमय मृत्यु की दर तेजी से बढ़ रही है। 1990 के दशक के दौरान ही मुद्रास्फीति अभूतपूर्व स्तर तक पहुँच चुकी थी। देश की आन्तरिक जरूरतों की कीमत पर निर्यात को बढ़ावा दिये जाने के कारण आवश्यक उपभोक्ता वस्तुएँ भी आम आदमी की पहुँच से बाहर चली गयी हैं।

देश में बेरोजगारी बेहद तेज गति से बढ़ रही है। वर्तमान देश में 18 करोड़ शिक्षित बेरोजगार हैं। हर साल एक करोड़ लोगों को नौकरी व रोजगार दिलाने का मोदी की चुनावी वादा इन तीन सालों में साफ-साफ झूठा साबित हो गया है। इन तीन सालों में मोदी सरकार सिर्फ ढ़ाई लाख नौकरियां ही दे पाई है। लाखों नौकरियों को खाली रखकर कर्मचारियों पर काम का बोझ को और बढ़ाई है। हर साल एक करोड़ 30 लाख लोग डिग्री पढ़ाई पूरा कर रोजगार बाजार में शामिल हो रहे हैं। इन्हें रोजगार दिला नहीं पाने वाली जनविरोधी सरकारों के रूप में केन्द्र व राज्य सरकारों का भण्डाफोड़ हो रहा हैं। मौजूदा नव-उदारवादी नीतियों के चलते यह बढ़ती समस्या विकराल रूप धारण कर रही है। इससे बाजार में सस्ते श्रम की उपलब्धता ज्यादा होने के चलते मजदूरों के वास्तविक वेतन में गिरावट हो रही है। काम को उप-ठेके देना, मशीनीकरण और उत्पादन प्रक्रिया का तर्कसंगत पुनर्गठन करते हुए जबरन सेवानिवृत्ति के साथ ही मजदूरों की छँटनी, भर्ती तथा नयी नौकरियों पर रोक भी धड़ल्ले से लागू की जा रही

है।

भारतीय शासक वर्ग चूँकि लगातार साम्राज्यवाद द्वारा प्रायोजित नयी औद्योगिक, वित्तीय तथा व्यापार नीतियों को लागू करते जा रहे हैं, अत: बड़े पैमाने पर छोटे और मध्यम स्वदेशी उद्योग या तो बन्द हो रहे हैं या बीमार घोषित किये जा रहे हैं। 1985 तक 1,30,000 ऐसी औद्योगिक इकाइयाँ बीमार घोषित की जा चुकी थीं। फरवरी 2001 तक आते-आते इनमें से करीब 40 प्रतिशत (लगभग 52 हजार) इकाइयाँ या तो बन्द हो गयीं या उनका कोई अता-पता नहीं लगाया जा सका। कांग्रेस और भाजपा सरकारें दोनों ने ऐसी नीतियों को अपनाने में सारी हदों को पार कर दिया था। छोटे उपभोक्ता सामानों का उत्पादन करने वाले उद्योग समेत सभी उद्योगों में साम्राज्यवादी वित्तीय पूँजी की घुसपैठ पर लगे सारे प्रतिबन्धों को समाप्त कर दिया। बैंक के कर्ज मंजूर करने पर लगी पाबन्दियां लगा दिया। नयी कपड़ा नीति के कारण हथकरघा और पॉवरलूम क्षेत्र में लाखों इकाइयाँ बन्द हो चुकी हैं, जिससे देश भर में लाखो-लाख बुनकर आज काम के मोहताज हैं। इस प्रक्रिया ने छोटे और मध्यम पूँजीपतियों के कुछ हिस्सों को भी प्रभावित किया है। मोदी सरकार द्वारा नोटबंदी, जीएसटी लागू करने से इनकी स्थिति और बिगड़ गयी। सिर्फ बहुराष्ट्रीय कंपनियां, उनके दलालों के उत्पादन और व्यावसायिक उद्योगों का ही समूचे देश में अपना दबदबा कायम रखने की स्थिति पैदा हुई है।

रुपये का अवमूल्यायन होते जाने की वजह से महंगे हो रहे आयात जुड़े होने के नाते पेट्रोल, डीजल, एलपीजी सिलिंडर, खाद, रोजमर्रा जरूरतें, चावल, गेहूं, दालें, खाद्य तेल, आलू, प्याज, सब्जियां आदि खाद्य और आवश्यक वस्तुओं की कीमतें आसमान छू रही हैं। इसके चलते जनता के सभी तबकों, खास कर गरीब और मध्यम तबकों की जीवन-स्थितियाँ लगातार बद से बदतर होती जा रही हैं। यूपीए-2 सरकार ने यह घोषणा की कि डीजल की कीमतों में हर महीने 50 पैसे की वृद्धि होगी। वर्तमान मोदी सरकार ने इसी नीति को ही जारी रखना ही नहीं, बल्कि तेल और प्राकृतिक गैस के दरों को भी बाजार के नियंत्रण पर छोड़ दी है। महंगाई के अलावा, सब्सिडियों (रिआयतों) और कल्याणकारी कार्यक्रमों में कटौतियां, फैक्टरियों के मालिकों द्वारा बंदी और तालाबंदी की घोषणा, लाखों मजदूरों की छंटनी, स्थायी मजदूरों की संख्या में कमी और उनके स्थान पर

के, अर्थात् साम्राज्यवाद का हथियार है) के रूप में सामने आता रहा है - दुनिया के पुनर्विभाजन के लिए उत्तरोत्तर तीव्र होती उनकी आपसी प्रतिद्वन्द्विता के अभिन्न अंग के रूप में समझा जाना चाहिए।

परन्तु विश्व पूँजीवादी व्यवस्था का संकट और प्रत्येक साम्राज्यवादी देश का संकट बद से बदतर होता जा रहा है। आर्थिक तथा वित्तीय संकट साम्राज्यवादी शक्तियों को दुनिया का पुनर्विभाजन करने और अपने-अपने माल के स्रोत तथा सस्ते श्रम, बाजारों, निवेश के क्षेत्रों तथा प्रभाव क्षेत्रों का विस्तार करने की ओर निरन्तर बढ़ा रहा है। साम्राज्यवादी शक्तियों के बीच सतत सौहार्दपूर्ण दिखायी देने वाले रिश्ते साम्राज्यवादी शक्तियों के बीच शक्ति-सन्तुलन में प्रच्छन्न (जो अभी दिखायी न दे रहे हों) परिवर्तनों के एक दौर के बाद आखिर टूट सकते हैं।

अमरीका ने आउटसोर्सिंग के रूप में, जापान तथा चीन जैसे कुछ देशों से अधिक से अधिक ऋण लेने के रूप में, दूसरी विश्व युद्ध के उपरान्त अमेरिकी साम्राज्यवादी अर्थव्यवस्था युद्ध अर्थव्यवस्था के रूप में तब्दील हो जाने एवं लगातार युद्धों में फंसे जाने, खास कर इराक तथा अफगानिस्तान के युद्धों के दलदल में लगभग डेढ़ दशक तक फंसे जाने के वजह से उसके सभी संसाधन खर्च होते जाने के कारण वह आर्थिक, राजनीतिक और रणनीतिक तौर पर कमजोर हो गया है। इस स्थिति में वह अपने मित्र देशों को राजनीतिक और सैनिक रूप से पहले जैसे अपने पक्ष में रख नहीं पा रही है। इस के वजह से ही विगत में अमेरिका पर निर्भर तुर्की, फिलिप्पीन्स आदि देश क्रमश: उससे दूर हो रही है। आर्थिक क्षेत्र में अमेरिका और यूरोपीय संघ के बीच बढ़ती स्पर्धा और अपनी आर्थिक संकट के कारण नाटो गठजोड़ के लिए वह पहले जैसे अधिक पैसों की आबंटन नहीं कर पा रही है। इस स्थिति में वह नाटो गठजोड़ में एकता कायम नहीं कर पा रही है। कमजोर पड़ने वाली अमेरिकी साम्राज्यवादी प्रभुत्व को फिर से खड़े करने के लिए राष्ट्रपति ट्रम्प द्वारा लागू नीतियां विश्व शांति के लिए गंभीर खतरा बनती जा रही हैं।

विश्व पूँजीवादी संकट से कई संदर्भों में केवल विश्व युद्ध के खतरे को तीव्र किया, उसके साथ-साथ क्षेत्रीय युद्धों की तरफ धकेल दिया है। 20वीं व 21वीं सदियों का इतिहास ने साबित कर दिखाया है कि जब तक साम्राज्यवाद रहेगा तब तक युद्ध अनिवार्य होगा। 20वीं सदी की पहली अर्धभाग में हुई दो विश्व युद्ध भी साम्राज्यवादियों के बीच विश्व प्रभुत्व के लिए और लूट के

हिस्सों के लिए ही संचालित किए गए हैं। दूसरी विश्व युद्ध के बाद दोनों महाशक्तियों (अमेरिका और तत्कालीन सोवियत संघ) के बीच जारी शीत युद्ध (cold war) के तहत विकसित और पिछड़े देशों में हुई अत्यधिक युद्धों में खुद प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से भाग लिया था। 1945 से लेकर 1990 तक एशिया, अफ्रीका तथा लातिन अमरीका के देशों में कम से कम 125 स्थानीय युद्ध, गृह युद्ध और सशस्त्र झडपें हुई हैं, जिस दौरान 4 करोड़ लोग मारे गये और करोड़ों जनता घायल हुए। इन युद्धों में आर्थिक विनाश पर गौर करें, तो यह दूसरे विश्व युद्ध के आँकड़ों को काफी पीछे छोड़ देता है।

1990 की दशक से इस तरह की युद्ध बड़ी संख्या में हुई हैं। मध्य एशिया में 1991 में इराक पर अमेरिकी दुराक्रमणकारी युद्ध, 1992 में बोस्निया, हेर्जेगोविना और कोसोवो में सर्बिया द्वारा रूसी साम्राज्यवादी-प्रायोजित युद्ध-अमेरिकी हस्तक्षेप, 1999 में युगोस्लाविया पर, 2001 में अफगानिस्तान पर और 2003 में इराक पर नाटो का दुराक्रमणकारी युद्ध, अमेरिकी साम्राज्यवादियों पूर्ण समर्थन से फिलिस्तीन, लेबनान जैसे देशों पर इज्रायली यहूदी विस्तारवादियों द्वारा अंजाम दिए गए हत्याकांड, उत्तरी अफ्रीका के मध्य सरोवर इलाके में - यानी तत्कालीन जाइरे, कांगो-ब्रेजविल्ली, सूडान आदि देशों में लूट के हिस्सों के लिए फ्रांस और अमेरिकी साम्राज्यवादी प्रायोजित युद्ध, उगांडा, रुवांडा और इथियोपिया में अमेरिकी प्रायोजित युद्ध, चेचेन्या पर रूसी रंगेभेदी युद्ध में लाखों लोगों की जानें गयी। अकेले इराक में अमरीकी आतंकवाद 1991-2002 के दौर में 7 लाख बच्चों समेत कुल 15 लाख लोगों की मौत और 2003-2006 के दौर में 6 लाख 55 हजार लोगों की मौत का जिम्मेदार है। ग्वान्तानामो खाड़ी तथा अबू ग़रीब में कैदियों को अमेरिकी सेना द्वारा दी जा रही यातनाओं की घटनाक्रम ने दुनिया को हिलाकर रख दिया। इस 21वीं सदी में अमेरीकी सेना द्वारा साजिशपूर्ण तरीके से हण्डूरस, युक्रेइन और मिस्र में संचालित तख्ता-पलटों में; ब्राजिल में संसदीय षड्यंत्र; अमेरीकी गठजोड़ द्वारा 20 देशों में संचालित फौजी हस्तक्षेपों के कारण प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से 3 करोड़ 20 लाख मुसलमानों की मृत्यु हुई। अफ्रीका में धर्मनिरपेक्ष व धनी देश लिबिया को ध्वस्त कर, एक समय में दुनिया में प्रवासियों को अधिकतम आश्रय देने वाली इस देश के आधे से ज्यादा आबादी को विस्थापित कर दिया गया। अमेरिका अपनी देश में जनकल्याण को भी बाजू में रखकर, बढ़ती इज्रायल की खर्चों को पाटने के लिए

विकीलीक्स इंटरनेट वेबसाइट में गोपनीय दस्तावेजों की लीक करने की घटना, बिना किसी विरोध के मोनसांटो और वालमार्ट के हितों में एवरग्रीन समझौते करने तथा भोपाल दुर्घटना के पीड़ितों को उचित मुआवजा नहीं देने वाले तथा दोषियों को 26 साल के आपराधिक विलम्ब के बाद भी सजा न देने वाले शासकों ने परमाणु उत्तरदायित्व विधेयक को पारित किया। इस तरह साम्राज्यवादियों और दलाल नौकरशाह पूंजीपतियों के हितों को पूरा करने में सभी पार्टियों ने संसद में एकजुटता दर्शायी है।

देश में एक के बाद एक लगातार उजागर हो रहे घोटालों ने शासकों के असली चेहरे को उजागर किया। दरअसल घोटालों या दलाली को अलग-अलग घटनाओं के रूप में नहीं देखा जा सकता। शासनतंत्र, न्यायव्यवस्था और प्रशासनप्रणाली अनाप-शनाप सम्पदाओं को जुटाने में लगी हुई हैं। इन घटनाओं को किसी एक पार्टी या खास व्यक्ति तक सीमित होकर देखने की परिस्थिति आज नहीं है। यह इस लुटेरी व्यवस्था का स्वाभाविक लक्षण बन चुका है। देश के इतिहास में ही एक बहुत बड़ा घोटाला के रूप में सामने आने वाली 1 लाख 76 हजार करोड़ रूपयों का 2जी स्पेक्ट्रम घोटाला मामले में सबूत के अभाव का हवाला देकर हाल ही में एक कोर्ट द्वारा इस को रफा-दफा कर देना इसका प्रमाण है।

मजदूर वर्ग और किसानों के अलावा जनता के अन्य मेहनतकश तबकों के हालात भी इन नयी आर्थिक नीतियों के कारण उत्तरोत्तर दयनीय होते जा रहे हैं। ठेला-फड़-फेरीवालों, रिक्शा चालकों आदि अर्द्ध-सर्वहारा की कतारें काफी विशाल हो चली हैं और वे असुरक्षित आमदनी, काम के अधिक घण्टे और पुलिस तथा स्थानीय प्रशासन की ओर से लगातार प्रताड़ना का शिकार हैं। बेरोजगारी में बेतहाशा वृद्धि, छँटनी की तलवार लगातार लटके रहने, वेतन-जाम, बढ़ती महँगाई, *''गोल्डन हैण्ड शेक''* के नाम पर जबरन सेवानिवृति, सब्सिडी सहित जन-कल्याणकारी योजनाओं में कटौती, काम के बढ़ते बोझ और यूनियन की गतिविधियों के विरुद्ध बढ़ती दमनात्मक कार्रवाइयों के चलते शिक्षकों, बिजली मजदूरों तथा कर्मचारियों और मध्यम वर्ग के कर्मचारियों के अन्यान्य तबकों की हालत लगातार दयनीय और असुरक्षित होती जा रही है। डाक्टरों, कालेजों एवं विश्वविद्यालयों के प्रवक्ताओं का स्थिति से भी इससे अलग नहीं

साथ समझौता करने की इजाजत देने के कारण हाईटेक पार्क, हाईटेक शहर और अन्य आधारभूत ढांचे की परियोजनाओं के निर्माण के लिए अमेरिकी साम्राज्यवादी सीधे तौर पर ऋण मंजूर कर रहे हैं। वाजपेयी सरकार ने ही विशेष आर्थिक ज़ोन (सेज़) स्थापित करने का फैसला किया, जहाँ कि कोई भारतीय कानून लागू नहीं होती है और साम्राज्यवादी कंपनियों को अपनी मनमानी चलाने की इजाजत दी जाती है। बाद में कांग्रेस सरकार ने 260 सेजों के लिए अनुमति मंजूर की। सेजों के लिए साम्राज्यवादियों और भारत की दलाल नौकरशाह पूंजीपतियों को जमीन उपलब्ध करने के लिए सरकारें लाखों एकड़ उपजाऊ कृषि जमीन को औने-पौने दरों पर किसानों से हड़पना भारतीय इतिहास में ही एक बहुत बड़ा जमीन जब्ती अभी चल रहा है। यूपीए सरकार दोबारा बनने के बाद परमाणु ईंधन के समझौते, माइनिंग पॉलिसी, बीज नीति, शिक्षा बिल, खुदरा क्षेत्र में पूंजीनिवेश, सार्वजनिक क्षेत्र के 'नवरत्न' उद्योगों को बेच देना, जीवन बीमा कम्पनियों में विदेशी पूंजीनिवेश बढ़ाना, शेयर बाजार में 25 प्रतिशत शेयर खुले बाजार में जारी करने की सभी कम्पनियों पर अनिवार्यता आदि सभी कदमों से यूपीए सरकार ने साम्राज्यवादियों की घुसपैठ को इतना आसान बनाया कि पहले कभी इतना नहीं था। कांग्रेस सरकार खुदरा व्यापार में विदेशी पूंजी को अनुमति देने पर अपना विरोध जताने वाला मोदी अभी अपनी शासन काल में उसी को ही आक्रामक रूप से लागू कर रहा है। इससे अमेरिका और यूरोप के खुदरा व्यापार के भारी कंपनियों ने भारतीय बाजार में प्रवेश कर लिया।

हाल में मोदी की शासन काल में हमारे देश की खनिज सम्पदा पर कब्जा करने की बड़ी होड़ मची है। इसके लिए विभिन्न राज्यों में, खासकर, झारखण्ड, छत्तीसगढ़ तथा उड़ीसा में लाखों करोड़ रुपयों के समझौता पत्रों पर दस्तखत हो चुके हैं। विशेष आर्थिक ज़ोन, खनन परियोजनाएं, बड़े बाँध, थर्मल प्रोजेक्ट, हवाई अड्डे, एक्सप्रेस हाईवे, बंदरगाह, बुलेट ट्रेन, जैसी तमाम साम्राज्यवादी प्रायोजित परियोजनाओं के चलते इस देश के मूलवासियों एवं किसानों की विस्थापन समस्या अभूतपूर्ण ढंग से तीव्र स्तर पर पहुंच चुकी है। परिणामस्वरूप पिछले कुछ सालों में 10 करोड़ लोग विस्थापित हो चुके हैं। यह जनता का जीवन-मरण समस्या बन चुका है। वास्तव में, विस्थापित समस्या भूमि समस्या के ही प्रतिबिम्बित करता है। यह जमीन समस्या कृषि-क्रांति के अंदर ही हल हो सकता है, जो नवजनवादी क्रांति की धुरी है।

लम्बी अवधि में 40 ट्रिलियन डालर की राशि देने, मुसलमानों के सफाया के लिए ट्रिलियनों (सैकड़ों हजार करोड़) डालर 'आतंकवाद पर युद्ध' ('War on Terror') के नाम पर खर्च करने के कारण अमेरीकी जनता को गरीबी से जूझते हुए प्रत्येक साल 17 लाख मरना पड़ रहा है। (Dr. Gideon Polya Mendacious War Criminal Obama's Final Speech To The UN General Assembly), 24 सितम्बर, 2016, पृष्ठ-3, प्वांइट-6)।

सिरिया में बशर अल असद सरकार को उखाड़ने के लिए पांच से ज्यादा वर्षों से अमेरीकी साम्राज्यवादियों के नेतृत्व में किये जा रहे हमलों के कारण पांच लाख लोग मारे गये। लगभग 20 लाख घायल हो गये। एक करोड़ 20 लाख जनता इस युद्ध के कारण विस्थापित होकर पड़ोसी देशों और यूरोप के देशों में शरण लिये हैं। शांति-सौहार्द तथा कई प्रचीन विश्वासों के साथ जी रही कबिलाई जनसमूहों और शांतिपूर्ण सहअस्तित्व से लैस उस धर्मनिरपेक्ष समाज को तहस-नहस कर दिया गया है। पिछले डेढ़ दशक के दौरान अफगानिस्तान, इराक, लिबिया और सिरिया आदि देशों में जारी साम्राज्यवादी दुराक्रमणकारी युद्धों के कारण लाखों लोगों का मरना, घायल होना और पड़ोसी देशों तथा यूरोप के देशों में प्रवासियों के रूप में शरण लेना बढ़ रहा है।

अमरीकी साम्राज्यवाद - दुनिया की जनता का नम्बर एक दुश्मन

इस तरह अतीत में ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के तरह ही, अमेरीकी साम्राज्यवाद ने भी युद्धों के जरिए ही विश्व भर में सम्पदाओं को लूटा है। दो विश्व युद्धों में अमरीकी इजारेदार संस्थाओं ने बड़े पैमाने पर फौजी साजो-सामान बेचकर अप्रत्याशित मुनाफें कमाए थे। इसके दौरान ही पूंजीवादी दुनिया में अमेरीका एक साम्राज्यवादी महाशक्ति व आधिपत्यशाली-शक्ति के रूप में उभरी है। अमेरीकी साम्राज्यवादी अर्थव्यवस्था एक युद्ध अर्थव्यवस्था के रूप में तब्दील होने के कारण उसका केन्द्रीकरण ज्यादातर युद्धों पर ही रहा है। पहले लगातार 350 अरब डालर के आँकड़े पर स्थिर रहे अमरीका के सैनिक बजट में 11 सितम्बर की घटना के बाद एकाएक उछाल आया है। यह अभी उसकी आम बजट से आधे से अधिक हो गयी है।

वर्तमान अमेरिका जहाँ अपने आर्थिक प्रभुत्व में क्षीणता और अपने राजनीतिक प्रभुत्व पर करारे प्रहारों को झेल रही है, वहीं वह बदहवासी के साथ

प्रयासरत भी है कि सामरिक तरीकों से और आज मौजूदा उनकी आर्थिक दबदबा से अपने समग्र प्रभुत्व के तहत एक 'नयी विश्व व्यवस्था' कायम की जाये। सोवियत संघ का एक महाशक्ति के स्थान से पतन हो जाने के बाद बाकी साम्राज्यवादी देशों के बीच अन्तर-साम्राज्यवादी अन्तरविरोधों के तीव्र से तीव्रतर होते जाने की स्थिति में, अन्य साम्राज्यवादी देश प्रत्यक्ष रूप से आक्रामक युद्धों में उतरने के लिए तैयार नहीं रहने की स्थिति में वहीं अमरीकी महाशक्ति दुनिया की जनता की जुझारू और न्यायसंगत संघर्षों को खून की नदियों में डुबो देने की मन्सूबे से लोमहर्षक साजिशें भी रच रही है।

विश्व बाजार में अपनी हैसियत और उत्पीड़ित देशों पर अपने घटते प्रभुत्व को कायम रखने के लिए जैसाकि इराक, अफगानिस्तान, सिरिया, लिबिया, सोमालिया और मालि में है, अमेरिकी साम्राज्यवाद आक्रमणकारी युद्ध छेड़ने का रास्ता अपना रहा है। ईरान, उत्तर कोरिया, क्यूबा, सूडान, यमन, वेनेजुएला, इक्वाडोर, बोलीविया, अर्जेण्टीना, पाराग्वे जैसे अनेक देशों में वह हस्तक्षेप, विध्वंस, बाँह मरोड़ने और भयदोहन की कार्रवाइयों में लिप्त है। उत्पीड़ित जनता तथा राष्ट्रों के क्रान्तिकारी संघर्षों का वह प्रत्यक्ष रूप से दमन कर रहा है। इसका एक मिसाल है कोलम्बिया। फिलिस्तीनी राष्ट्र के जायज संघर्षों का दमन करने के लिए वह इजराइल सरीखे अपने पाले-पोसे राज्यों (surrogate states) का इस्तेमाल कर रहा है।

एशिया, अफ्रीका, लातिन अमेरिका के देशों में अपने विध्वंस, हस्तक्षेप, बाँह-मरोड़ने तथा प्रत्यक्ष आक्रमण जैसे कुकर्मों पर पर्दा डालने के लिए अमेरिकी साम्राज्यवाद लोकतन्त्र की हिफाज़त, विश्व शान्ति व स्थिरता का बचाव, आतंकवाद का दमन, कमजोर व बेसहारा राष्ट्रों की रक्षा, खतेरे में पड़े हुए अमेरिकी और उसी मित्र देशों के हितों की रक्षा जैसे तमाम झूठे बहानों को इस्तेमाल करता रहा है। जैसा कि 1991 में इराक पर छेड़े गये आक्रमणकारी युद्ध में तथा बोस्निया, कोसोवो तथा अन्य क्षेत्रों में एक दशक से ज्यादा समय तक लगाये गये प्रतिबन्धों में देखा गया है, वह अपने नापाक मन्सूबों को पूरा करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ को भी एक उपकरण बनाता रहा है।

सबसे अत्याधुनिक तकनोलाजी द्वारा सम्भव बनायी गयी सबसे क्रूर एवं बर्बर बमबारी से बच्चों समेत हजारों-लाखों निर्दोष लोगों की हत्या करने वाले अमेरिकी साम्राज्यवादी दुनिया के नम्बर एक अन्तरराष्ट्रीय आतंकवादी हैं। वे ही

सरकारी बैंकें कुल 3.30 लाख करोड़ रूपये कार्पोरेट करों को रद्द की। बड़े कार्पोरेट कंपनियों को लाखों करोड़ रूपये करों रियायती देना; प्रत्यक्ष और परोक्ष करों से जनता पर लादा गया भारी बोझ; भारी भरकम विदेशी ऋण कुल मिला कर बढ़ता वित्तीय घाटा; सार्वजनिक क्षेत्र के शेयर भारतीय व विदेशी कार्पोरेट कम्पनियों को बेच देना; भारतीय व विदेशी बड़े निगमों के हित में बुनियादी ढांचा के निर्माण को प्राथमिकता देना; ऋण प्राप्ति के बांड लगातार जारी करना; और नव-उदारवादी नीतियों के तहत इस तरह की कार्यवाहियों पर अमल करने के चलते देश में आर्थिक संकट और भी तीखा हो रहा है।

डालर की तुलना में रूपये का मूल्य दिन ब दिन गिरती जा रही है। जनवरी 1991 में डालर का मूल्य रु. 18.20 था, जो मई 1995 में बढ़ कर रु. 31-40 हो गया। वर्ष 2003 में यह रु. 48-50 के अभूतपूर्व स्तर तक पहुँचा। रुपए का विनिमय मूल्य 2013 में रिकार्ड स्तर पर गिरकर 54-55 रुपए तक, 2018 में 64-65 रूपए प्रति डालर तक हो गया।

केन्द्र में सत्ता में जो भी सरकार हो, देश की अर्थव्यवस्था साम्राज्यवादियों द्वारा दी जाने वाली कर्ज और निवेशों पर आधारित व्यवस्था के रूप में तब्दील हो गयी। देश में होने वाली पोर्टफोलियो निवेश बड़े पैमाने पर बढ़कर देश की अर्थव्यवस्था पर अपनी वर्चस्व कायम कर रही है। इस किस्म की सटोरिया पूँजी से साम्राज्यवादियों और देश के उनके दलालों को मुनाफा काफी ज्यादा होता है।

यूपीए-1, 2 के सरकारें भले ही भाजपा सरकार द्वारा देश की परिसम्पत्ति (सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों) को औने-पौने दामों पर बेच देनेवाले विनिवेश मंत्रालय को भंग करने का दिखावा किया हो, वास्तव में कई क्षेत्रों में साम्राज्यवादी पूंजी को प्रवेश करने की इजाजत दी। विदेशी पूँजी को देश के बड़े हवाई अड्डों की निर्माण में इजाजत देना, कोयला खदानों के क्षेत्र में 100 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की इजाजत देना, विदेशी बैंकों तथा बीमा कम्पनियों को भी देश में पूरी तरह अपना व्यवसाय चलाने की इजाजत देना, सर्वाधिक मुनाफा कमाने वाली सार्वजनिक क्षेत्र के इकाइयों के शेयर औने-पौने दामों पर बेच देना, कई प्रदेशों में बिजली के उत्पादन क्षेत्र का निजीकरण करना, परिवहन और संचार के क्षेत्रों का निजीकरण करना, राष्ट्रीय राजमार्ग, बंदरगाहों, जल मार्गों का निर्माण योजनएं इसी के अंदर आता है। सीधे प्रदेश सरकारों के

ीन वित्तीय प्रष्ठिानों द्वारा निर्देशित सभी नीतियों को लागू करना जारी रखा। ''सुधारों के दूसरे चरण'' के नाम पर इन नीतियों को लागू करने में ये पीवी नरसिम्हा राव सरकार को भी पछाड़ दिया।

इसके साथ-साथ एन.डी.ए. सरकारें प्राय: सभी क्षेत्रों में साम्राज्यवादी पूँजी की घुसपैठ के लिए लगभग सभी अवरोधों को हटा दिया है। बचे-कुचे कुछ प्रतिबंधों को भी पूरी तरह रद्द करने के घोषणाएं कर रही हैं। दलाली शासकों ने ऐसे कुछ सार्वजनिक भारी उद्योगों को भी औने-पौने दामों में बेच दिया जो भारी मुनाफा कमा रहे हैं। इसके लिए उन्होंने विनिवेश मंत्रालय गठित किया। आयात-प्रतिबन्धों को ढीला करते हुए आयात के लिए भारतीय बाजार के द्वार खोल देने के साथ ही साथ निर्यातोन्मुख उत्पादन को भी बढ़ावा दिया जा रहा है। रोजमर्रे के इस्तेमाल की सैकड़ों वस्तुओं पर आयात शुल्क पूरी तरह हटाया जा चुका है। साम्राज्यवादी बैंकों के प्रवेश पर लगे तमाम प्रतिबन्धों को हटा लिया गया है। कृषि क्षेत्र में और इससे जुड़ी हुई क्षेत्र में साम्राज्यवादी कंपनियां, देश के कार्पोरेट कंपनियां व्यापक रूप से घुसपैठ करने की नीतियां लागू कर रही हैं। सबसे बढ़ कर यह कि इन्होंने हड़तालों पर रोक और प्रतिबन्ध लगाते हुए नयी श्रम नीति पारित की है और इसे लागू करना शुरू भी कर दिया है। साम्राज्यवादियों, खास कर अमेरिकी साम्राज्यवादियों को भारतीय बाजार में निर्बाध प्रवेश दिलाते हुए उनके ज्यादा वफादार दलाल के रूप में काम करने के मामले में ये तमाम पुरानी सरकारों से आगे निकल गये हैं। इस तरह इन्होंने साम्राज्यवादियों को हमारे सस्ते श्रम, भूमि, कच्चे माल, अधिरचना सुविधाओं, जनता की बचत और अन्य भारतीय संसाधनों को सरेआम लूट ले जाने की इजाजत दे दी है। कारोबार के प्रत्येक क्षेत्र में अनेक रिआयतें देने के साथ ही साथ इन्होंने साम्राज्यवादी पूँजी के लिए बीमा जैसे भारी मुनाफें वाली क्षेत्र को भी खोल दिया है।

रियायतों के नाम पर जनधन को लूटने कार्पोरेट घरानों को चूट दिया जा रहा है। सिर्फ 2015-16 में ही कार्पोरेट कंपनियों को 6.11 लाख करोड़ रूपये कर में रियायती दी गयी। 2004 से 2015-16 के बीच 12 साल के समयकाल में इस तरह कार्पोरेट कंपनियों को कुल 50 लाख करोड़ रूपये कर में रियायती दी गयी। सिर्फ इस वित्तीय वर्ष 2017-18 में पहले छ: सप्ताह में ही इन कंपनियों को 55,356 करोड़ रूपये कर्ज माफ की गयी। पिछले 10 वर्षों में (2007-2017)

विश्व शान्ति के लिए सबसे बड़ा खतरा है। अपने इन सारे घृणित तथा कायराना कारनामों से अमेरिकी साम्राज्यवाद विश्व राजनीति में पहले से कहीं ज्यादा अलग-थलग पड़ गया है। वह सारी दुनिया की व्यापक जनता के आक्रोश का केन्द्र बन गया है। 1990 के दशक और नयी सहस्राब्दि के शुरुआती वर्षों से अभी तक बीते लगभग दो दशकों में अमेरिकी कुकृत्यों की भर्त्सना करते हुए उत्पीड़ित जनता तथा राष्ट्रों के अमेरिका-विरोधी व्यापक प्रदर्शनों का नये सिरे से विश्वव्यापी उभार देखा गया है।

विभिन्न देशों पर उसकी आक्रमणकारी हमले और कारनामों के खिलाफ अमेरिका के झण्डे को जलाते हुए, उसके दूतावास पर हमला करते हुए और प्रतिरोध के विभिन्न तरीकों से अपने गुस्से का इजहार करते हुए सड़कों पर उतर पड़े दुनिया भर की लाखो-लाख जनता का आक्रोश अमेरिकी साम्राज्यवादियों के ही खिलाफ केन्द्रित रहा है। इस्लामी दुनिया की जनता में बढ़ती अमेरिका-विरोधी भावनाओं और रोष के कारण इन देशों की सरकारें दिखावे के लिए तात्कालिक तौर पर ही अमेरिका-विरोधी रुख अपनाने को बाध्य हुई हैं। सऊदी अरब, मिस्र तथा तुर्की की सबसे ताबेदार सरकारों ने भी अपनी जनता की बढ़ती अमेरिका-विरोधी प्रदर्शनों से घबराकर अमेरिका की नीति का कुछ हद तक विरोध किया और इराक पर अमेरिका के आक्रमण के लिए अपनी सरहदों के इस्तेमाल की इज़ाज़त नहीं दी। न केवल यूरोप, वरन् अफ्रीकी राष्ट्राध्यक्षों ने भी जब अमरीकी प्रतिबन्धों की खुलेआम अवहेलना की, तो क्यूबा, इरान तथा लीबिया को अलग-थलग करने के अमेरिका के प्रयास नाकाम रहे।

इसके अलावा जहाँ अमेरिकी साम्राज्यवादी नाटो को पूरी तरह अपने प्रभुत्व के अधीन रखने और उसके सदस्य देशों को अपनी नीतियों का समर्थन करने तथा उनके सशस्त्र बलों को अमेरिकी नेतृत्व वाले युद्धों में शामिल करने की जबरदस्ती करने पर आमादा थे, वहीं अमेरिका और नाटो के अन्य सदस्यों के बीच, खासकर तुर्की, फ्रांस तथा जर्मनी के बीच अन्तरविरोध बढ़ते रहे हैं। साथ ही जैसे-जैसे वारसा सन्धि के विघटन के बाद पैदा हुई रिक्तता का इस्तेमाल करते हुए नाटो रूस की सीमाओं तक अपना नियन्त्रण का दायरा फैलाने का प्रयास करता रहा है वैसे-वैसे रूस और अमेरिका के नेतृत्व वाले नाटो के बीच अन्तरविरोध भी तीखे होते जा रहे हैं। रूसी साम्राज्यवाद की कमजोरियों का सबसे ज्यादा फायदा अमेरिकी साम्राज्यवाद उठा रहा है। इसने जार्जिया तथा

अज़रबैजान जैसे 'स्वतन्त्र राज्यों के राष्ट्रकुल' (सीआईएस) के देशों में अतिक्रमण शुरू कर दिया है।

अमेरिकी जनता ने जैसे तत्कालीन बुश की रिपब्लिकन पार्टी को नकारा, उसके बाद ओबामा की डेमोक्रटिक पार्टी को भी नकार दिया। वर्तमान नस्लभेंद को उकसाकर सत्ता में काबिज ट्रम्प भी इसी रास्ते में बढ़ रहा है। इसलिए बीते वर्ष में ट्रम्प की तानाशाही शासन के खिलाफ अमेरिका में और विश्व भर में विरोध प्रदर्शनों का उभार आया है।

दुनिया की उत्पीड़ित जनता और देशों को एकताबद्ध होकर लाखो-लाख जनता को अकथनीय पीड़ा-व्यथा दे रहे इस अमेरिकी साम्राज्यवाद के खिलाफ विश्व सर्वहारा के नेतृत्व में अविराम संघर्ष छेड़नी होगी। अमेरिकी दानव पर हर तरफ से हमला करते हुए, उसी समय में, हमें दुनिया की जनता पर यूरोपीय, रूसी तथा जापानी एवं वर्तमान नए तौर पर पटल पर आयी हुई चीनी सामाजिक साम्राज्यवादियों के भारी खतरे को भी भूलना नहीं चाहिए।

फासीवादीकरण और जनान्दोलनों पर विश्वव्यापी प्रतिक्रियावादी आक्रमण

जीवन के हर क्षेत्र को चपेट में लेने वाले तीव्र से तीव्रतर होते पूँजीवादी संकट का मुकाबला करने और साम्राज्यवादी दुराक्रमणकारी युद्धों के खिलाफ, शोषण और उत्पीड़न के खिलाफ विश्व के उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं और जनता द्वारा जारी क्रांतिकारी, जनवादी और राष्ट्रीय मुक्ति संघर्षों को कुचलने के लिए साम्राज्यवाद आम तौर पर फासीवाद का ही सहारा लेता रहा है। पूँजी और उत्पादन का संकेन्द्रण तथा केन्द्रीकरण जितना अधिक होता जाता है, इन विराट इजारेदारियों का राजनीतिक प्रतिक्रियावाद उतना ही बढ़ता जाता है। जब-जब बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हितों के अनुसार इसकी जरूरत पड़ी, तब-तब उन्होंने तमाम पिछड़े देशों में सैनिक फासीवादी सरकारें स्थापित की हैं। दुनिया की तकदीर का फैसला कर रहे और पिछड़े देशों पर अपनी शर्तें थोपनेवाले तकरीबन 200 बहुराष्ट्रीय निगम आज प्राय: किसी भी देश में चुनी हुई सरकार को गिरा सकते हैं और फासीवादी तानाशाही सरकारों को स्थापित करवाकर नाममात्र के जनवादी अधिकारों पर भी अंकुश लगा सकते हैं। बहुराष्ट्रीय निगमों तथा विभिन्न देशों के शासक वर्गों के लिए यह अनिवार्य हो गया है कि अपना अतिलाभ कमाने के लिए; मजदूर वर्ग से अधिकतम सम्भव अतिरिक्त मूल्य निचोड़ने के

नव-जनवादी भारत की स्थापना की दिशा में एक ही प्रवाह में तब्दील कर पायेगा। उसके बाद दुनिया के पैमाने पर समाजवाद तथा साम्यवाद के निर्माण की दिशा में आगे बढ़ पायेगा।

भारतीय दलाल शासक वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाली, केन्द्र/राज्य सरकारों में सत्ता संभालने वाली संसदीय पार्टी जो भी हो, सारांश में वे सब साम्राज्यवादी शोषणकारी हितों को ही पूरा करती है। भूतपूर्व नेहरू और गांधी परिवारों के नेतृत्व वाली कांग्रेस सरकारों की तरह ही, साम्राज्यवादियों के लिए सेवा करने के तहत 1992 में नए अर्थनीति को लागू करने वाले पी.वी. नरसिंहाराव के नेतृत्व में कांग्रेस सरकार भी अमेरिकी साम्राज्यवादी-परस्त एल. पी.जी. नीतियों को अमल करना शुरू किया। उसके बाद सत्तारूढ़ वाजपेयी नेतृत्व वाली एन.डी.ए. (राजग) सरकार खुद अपनी 'स्वदेशी' नकाब को फाड़ कर वही एल.पी.जी. नीतियों को रफ्तार दिया। उसके उपरान्त सत्ता पर काबिज मनमोहन सिंह नेतृत्ववाली यू.पी.ए.-1, 2 सरकारे 'मानवीय चेहरा' के नाम पर एलपीजी नीतियों को ही और तेज किया। वर्तमान मोदी नेतृत्वाधीन एन.डी.ए. सरकार भी 'मेक इन इंडिया' और 'व्यवसाय को आसान करने' (ease of business) के नाम पर देश में साम्राज्यवादियों, खासकर, अमेरिकी साम्राज्यवादियों के शोषण को और तीव्र करने वाली नीतियों को ही आक्रामक रूप से अमल कर रही है।

अंतरराष्ट्रीय मुद्दों पर, भारत के शासक वर्ग अफगानिस्तान पर अमेरिकी-नाटो बलों के आक्रमणकारी युद्ध अपनी बिना शर्त समर्थन की घोषणा की। उनके द्वारा इराक पर की गयी हमले पर अपनी कपटतापूर्ण चुप्पी साध ली। तत्कालीन गुजरात के मुख्यमंत्री मोदी का वीजा भंग कर 'मानवाधिकार संरक्षण का चेहरा' दर्शाने वाली अमेरिका ने उसी मोदी को देश का प्रधानमंत्री बनाने में मुख्य भूमिका अदा की। फिलिस्तीन राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष पर अमेरिकी साम्राज्यवादी एजेंट इज्रायल द्वारा अंजाम दी गयी जघन्य हत्याकांड के प्रति भी सभी सरकारें कपटतापूर्ण चुप्पी साधे रही।

आर्थिक नीतियों के मामले में, भाजपा के नेतृत्व वाली एन.डी.ए. के केंद्र व राज्य सरकारें साम्राज्यवादी लूट-खसोट के लिए तमाम रास्ते खोलने में पुराने सभी रिकार्ड तोड़ डाले। ''स्वदेशी'' मन्त्र जपते हुए इन्होंने अमेरिकी नेतृत्वाध

उद्योग में ही नहीं बल्कि सरकार के शासनतंत्र और सेवा क्षेत्र में बड़े पैमाने पर ठेका मजदूरों और अस्थाई मजदूरों एवं कर्मचारियों का अनुपात बढ़ रहा है। संगठित क्षेत्र के बड़े कारखानों से नौकरियाँ असंगठित क्षेत्र के छोटे कारखानों की ओर स्थानान्तरित हो रही हैं। इस तरह की कम मजदूरी वाले क्षेत्रों में कार्यरत महिला मजदूरों का काफी तीव्र शोषण होने के साथ-साथ लिंग के आधार पर प्रताड़ित किया जाता है। शासक वर्ग मजदूरों के संगठित होने तथा संघर्ष करने के अधिकारों को जिन्हें विगत में संघर्षों से हासिल किया गया था, एलपीजी नीतियों को अमल करने के तहत, वापस ने का प्रयास कर रहे हैं। पूँजीवादी अदालतें मजदूरों के संगठित होने तथा संघर्ष करने के अधिकारों पर भारी कुठाराघात करने वाले, एक के बाद एक फैसले करते हुए आक्रामक रूप से मजदूर-विरोधी भूमिका में उतर रही हैं।

पिछले कुछ सालों के दौरान विभिन्न तबकों के मजदूरों ने देश के विभिन्न हिस्सों में, खास कर, खनन क्षेत्र में साम्राज्यवाद द्वारा प्रायोजित शासक वर्गों की नयी आर्थिक नीतियों के खिलाफ कई बहादुराना संघर्ष छेड़े हैं। आम तौर पर ये संघर्ष परम्परागत ट्रेड यूनियनों की सीमाओं को भी तोड़ते हुए आगे बढ़ते रहे हैं। संक्षेप में कहें, तो मजदूर वर्ग के विभिन्न हिस्से केवल इन्हीं नीतियों के विरुद्ध अपने संचित आक्रोश को ही व्यक्त नहीं करते रहे हैं, बल्कि अपने विद्रोही विचारों को भी व्यक्त कर रहे हैं। उनके पास इन नीतियों के विरुद्ध जीवन-मरण का संघर्ष छेड़ने और वर्तमान सीमाओं को तोड़ने के अलावा और कोई चारा नहीं है। लेकिन मजदूर वर्ग अपने ऐतिहासिक मिशन को पूरा करने की दिशा में तभी आगे बढ़ सकता है जब सर्वप्रथम उनमें गहरी जड़ जमा चुके संशोधनवाद, सुधारवाद तथा अर्थवाद के प्रभाव को मिटा दिया जायेगा, मजदूर वर्ग के भीतर से ठोस पहल की जायेगी तथा क्रान्तिकारी नीतियों को अपनाया जायेगा और उसे संशोधनवादी भाकपा/माकपा की ट्रेड यूनियनों समेत शासक वर्ग द्वारा संचालित ट्रेड यूनियनों के गिरफ्त से खुद को मुक्त किया जायेगा। तभी सर्वहारा वर्ग अपनी ऐतिहासिक लक्ष्य को हासिल करने के लिए आगे बढ़ सकती है। अपनी माओवादी पार्टी के फौलादी नेतृत्व में मजदूर वर्ग अधिक पुरजोर तरीके से जनता के विभिन्न तबकों के, खास कर साम्राज्यवाद तथा सामन्तवाद के विरुद्ध किसानों के सभी समन्वय साथ संचालित करते हुए, उन्हें और मजबूती से गोलबन्द व लामबन्द कर पायेगा और उन संघर्षों को पुराने भारत को ध्वस्त करते हुए

लिए; अर्थव्यवस्था का पुनर्गठन करने के लिए; साम्राज्यवादी संकट के बोझ को जनता की पीठ पर लाद देने के लिए और सर्वोपरि, जन विद्रोहों का दमन करने के लिए फासीवादी सरकारों को बैठाया जाय। इसके तहत अमेरिका और यूरोप के देशों में दक्षिणपंथी, सांप्रदायिक और फासीवादी पार्टियां क्रमशः मजबूत होते हुए सत्ता में आ रही हैं।

दुनिया के प्रायः हर देश में दमनकारी कानून तथा फासीवादी कानून तैयार कर लेने के लिए 11 सितम्बर के हमले साम्राज्यवादियों के काम आये हैं। खास कर पिछले कुछ वर्षों में अमरीका में 'देशभक्त कानून' व आन्तरिक सुरक्षा कानून जैसे तमाम कानून लागू किये गये हैं। समूचे यूरोप में अप्रवासी-विरोधी कानून तथा प्रतिबन्ध आम बात हो गयी है। भारत में टाडा, पोटा, उपा, अफ्स्पा जैसे कई दमनकारी कानून तैयार किये गये हैं और खाड़ी क्षेत्र के सभी शेखों के साम्राज्यों में, तुर्की, जार्डन, पाकिस्तान, इण्डोनेशिया, फिलीप्पीन्स, मलेशिया, चीन में, पूर्वी यूरोप के देशों में, बाल्टिक गणराज्यों तथा लातिन अमरीका के सभी देशों में मौलिक अधिकारों पर अंकुश लगाने वाले दमनकारी कानून आम बात हो गयी है।

दूसरी तरफ धर्मोन्माद, रंगभेद, अंधराष्ट्रवाद और युद्धोन्माद को उकसा कर जनता को क्रांतिकारी रास्ते से भटकाने की कोशिश की जा रही है। दुनिया भर में कार्पोरेट मीडिया इन भावनाओं से जनता के दिलों को लगातार प्रदूषित कर रही है। इसने निम्नपूंजीपति और पूंजीपति के नेतृत्व बढ़ने और सांप्रदायिक ताकतें, फासीवादी-सामाजिक फासीवादी ताकतें मजबूत होने के लिए रास्ता सुगम बनाया है।

इस परिप्रेक्ष्य में सर्वहारा वर्ग को एक तरफ धुर दक्षिणपन्थी प्रतिक्रियावादी शक्तियों को, तो दूसरी तरफ मजदूर वर्ग के आन्दोलन की पाँतों में भितरघाती के रूप में काम कर रहे सामाजिक फासीवादियों को अलगाव में डालते हुए और उनके खिलाफ जुझारू तथा समझौताविहीन संघर्षों के जरिये सामाजिक फासीवाद सहित हर तरह के फासीवाद से लोहा लेना बहुत जरूरी है।

इस तरह, विशेष कर 1990 से, पूर्वी यूरोप और पूर्ववर्ती सोवियत संघ में जन उभार तथा संशोधनवादी पार्टियों के नेतृत्व में स्थापित नौकरशाह पूँजीवादी सत्ताओं के पतन के बाद समूची दुनिया में साम्राज्यवादियों तथा प्रतिक्रियावादियों

ने समाजवाद, साम्यवाद और मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद के खिलाफ पूरे जोर-शोर से कुत्सित प्रचार मुहिम छेड़ रखने की पृष्ठभूमि में सामाजिक वर्गों की प्रासंगिकता से इन्कार करने वाले, वर्ग विश्लेषण को महज आर्थिक निष्कर्षवाद करार देनेवाले और नस्ल, लिंग, जाति, राष्ट्रीयता आदि के रूप में इन्सानी पहचान को ही आज का समकालीन यथार्थ बताने वाले उत्तर-आधुनिकतावाद, उत्तर-मार्क्सवाद आदि बुर्जुआ और पेटीबुर्जुआ सिद्धान्त सामने आये हैं। इनका दावा है कि आज ''विचारधाराओं के अन्त'', ''इतिहास का अन्त'' आदि का दौर आ चुका है, कि पूँजीवाद ही एकमात्र कारगर व्यवस्था के रूप में अन्तिम विजय प्राप्त कर चुका है और कि इसका ''विकल्प नहीं है।'' इनका यह दावा है कि महज राजसत्ता के लिए संघर्ष करना ही किसी को भ्रष्ट बना देता है, कि इस तरह कायम होने वाली सत्ता अनिवार्य रूप से निरंकुश होती है और केन्द्रीय योजना अपने आप नौकरशाही को जन्म देता है। राज्य के विकल्प के रूप में ये 'नागरिक समाज' की बात करते हैं और आर्थिक क्षेत्र में बाजार को ही नियामक शक्ति के रूप में काम करते देखना चाहते हैं। इस तरह ये सभी रुझान – जिनमें से कुछ तो अभी ''वामपन्थी'' नकाब ओढ़े हुए भी हैं – ये अन्तरराष्ट्रीय पूँजी की नव-उदारवादी नीतियों और नियन्त्रण तथा शोषण के नव-औपनिवेशिक रूपों के प्रत्यक्ष व परोक्ष पैरोकार हैं और क्रान्ति की राह में बड़े अवरोध बन गए हैं। इनका लक्ष्य है, उत्पीड़ित वर्गों को वर्ग के आधार पर एकजुट होने से रोकना और सर्वहारा क्रांतियों पर रोक लगाना।

इसी तरह, प्रचण्ड-अवाकियन के नये संशोधनवाद के साथ-साथ रंगबिरंगे संशोधनवाद, संसदवाद, हमारे देश में गांधीवाद भी जनता को क्रांतिकारी रास्ते से भटकाने के लिए यथासंभव कोशिशें कर रहे है। कुछ संशोधनवादी यह दावा करते हुए आधुनिक 'काउट्स्की' के रूप में सिर उठा रहे हैं कि वित्तीय पूंजी से विश्व को पुनरविभाजन करने वाली प्रतिस्पर्धा का अंत हुआ है, विश्व युद्धों का चरण का अंत हो गया है, वैसे ही लेनिन के सिद्धांत का भी अंत हो गया है। हमारे देश में सुधारवाद, गांधीवाद, कानूनवाद, अर्थवाद, अवसरवाद, संशोधनवाद और उत्तर-आधुनिकतावाद के इन रूझानों के खिलाफ संघर्ष कर हराए बिना नवजनवादी क्रांति और विश्व समाजवादी क्रांति को आगे बढ़ाना असंभव है।

होने की वजह से गरीब किसान जो शहरों और कसबों में पलायन कर गए हैं, फिर से ग्रामीण इलाकों में अपने मूल निवास स्थलों के तरफ चले जाने की रूझान बढ़ रही है। यह अर्धसामंती व्यवस्था की लक्षण के सिवा और कुछ नहीं है।

साम्राज्यवाद, सामंतवाद और दलाल नौकरशाही पूंजीवाद के एजेंटों के रूप में काम कर रहे स्थानीय निरंकुश उत्पीड़कों के गिरोहों, बुरे शरीफजादों, बिचौलियों, पुलिस, अदालतों और सरकारी अधिकारियों के एक भारी-भरकम तंत्र द्वारा तथा विभिन्न किस्म की सामंती मान्यताओं द्वारा जारी शोषण व उत्पीड़न के जरिए किसान-जनता की जिन्दगी तबाह कर दी गई है। इन तमाम चीजों ने किसान-जनता की जिन्दगी को असहनीय बना डाला है। यह सामंती उत्पीड़न सिर्फ ग्रामीण क्षेत्रों तक सीमित नहीं है और न ही यह किसान-जनता तक ही सीमित है, बल्कि यह अर्द्धसामंती उत्पादन-पद्धति खुद राज्य-मशीनरी के जरिए और विचारधारात्मक, सांस्कृतिक व ऊपरी ढांचे के अन्यान्य पहलुओं के जरिए देश की व्यापक जनता का भी उत्पीड़न करती है। सामंती शोषण और उत्पीड़न न सिर्फ कृषि-अर्थव्यवस्था के विकास के मार्ग को, बल्कि भारतवर्ष के औद्योगिक विकास के मार्ग को भी अवरूद्ध कर रहा है। सामंतवाद भारतवर्ष के आर्थिक और सामाजिक विकास के रास्ते की प्रमुख बाधाओं में से एक है। अतः निस्सन्देह यह कहा जा सकता है कि सिर्फ किसानों का ही नहीं, बल्कि देश की व्यापक जनता का सामंतवाद के साथ अन्तरविरोध मौजूद है। जोतने वालों को जमीन के आधार पर सशस्त्र कृषि-क्रांति की धुरी पर निर्भर होकर नवजनवादी क्रांति को सफल बनाने द्वारा ही, यानी देश में अर्ध सामंती संबंधों को तोड़ने द्वारा ही इस अंतरविरोध को हल करने के सिवा और दूसरा रास्ता नहीं है।

पूँजी और श्रम के बीच का अन्तरविरोध

मजदूर वर्ग ले-ऑफ, छँटनी, वेतन में बढ़ोतरी पर रोक एवं वेतन कटौती, औद्योगिक हादसों, सामाजिक सुरक्षा के रूप में मिलनेवाले लाभ की समाप्ति, श्रम का अस्थाईकरण और काम की रफ्तार तेज किये जाने आदि का शिकार हो रहा है। ट्रेड यूनियनों की न्यूनतम गतिविधियों पर भी पाबन्दियाँ लगायी जा रही हैं। वैश्वीकरण नीतियों के परिणामस्वरूप औद्योगिक, सूचना, संचार तथा मनोरंजन

साम्राज्यवादी संस्थाओं के निर्देशों पर सब्सिडी खत्म किये जाने के चलते खाद की कीमतों में वृद्धि, आधारभूत ढाँचे (infrastructure) के लिए दी जाने वाली सब्सिडी को समाप्त किये जाने और पानी, बिजली, परिवहन तथा डीजल की दरों में भारी वृद्धि, कृषि-उत्पादन की बढ़ती लागत, व्यापार की प्रतिकूल शर्तें, भारतीय खाद्य निगम को बन्द किया जाना, लाभदायक मूल्य प्रणाली को बन्द करने की दिशा में उठाये जा रहे कदम और सूदखोरों, वित्तीय संस्थाओं तथा अन्य कर्जदाताओं का सूद के दमघोंटू जाल से केवल मध्यम किसान ही नहीं, बल्कि धनी किसानों के एक बड़े हिस्से भी बुरी तरह प्रभावित हो रही है। यूपीए-1 सरकार की 'दूसरी हरित क्रांति' के नाम पर लागू किए गए नीतियों की वजह से किसानों की आत्महत्याएं नहीं रुकी है। सरकार ने अपनी बजट में किसानों की 80 हजार करोड़ की कर्जा माफी कर दी, जबकि कॉर्पोरेट वर्गों को वह पांच लाख करोड़ रुपए की करों में रियायती दी। इस में मोदी सरकार मनमोहन सिंह के सरकारों से आगे है। बातों में किसानों की भलाई का ढिंढोरा पीटने वाली सभी सरकारें, वास्तव में, कॉर्पोरेट वर्गों की किस तरह सेवा कर रही है, इसे आसानी से समझ सकते हैं। अपने कर्ज, फसल के नुकसान, बढ़ती खेती खर्च और खेती की उपज के गिरते दामों के चलते पिछले 21 वर्षों में देश में 3.30 लाख किसानों और मोदी के तीन साल की शासन में 36 हजार किसानों ने आत्महत्या कर ली है। दूसरी तरफ, गोदामों में भरा पड़ा अनाज अधिकाधिक सड़ता जा रहा है। ये सभी अन्तरविरोधी पहलू नव-औपनिवेशिक रूप के तहत अर्द्ध-औपनिवेशिक तथा अर्द्ध-सामन्ती ढाँचे का सुस्पष्ट लक्षण हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि किसान किसी भी हालात में जमीन नहीं चाहते हैं, वे जमीन पर आधारित व्यवस्थाओं से अलग होने चाहते हैं। इसलिए उन लोगों को एसा दिखाई पड़ता है कि 'जोतने वालों को जमीन' के कार्यक्रम-आह्वान पुराना हो गया और वह एक जांच करने योग्य मुद्दा है। उपनिवेश के रूप में रहने के इतिहास से लेकर 70 साल की 'आजादी' की इतिहास तक भारतीय सामाजिक-आर्थिक ढांचा में साम्राज्यवाद मजबूती से घुसपैठ करने के कारण जमीन आधारित व्यवस्थाओं को छोड़कर अपने जीवन-यापन करने के लिए लोग फौरी तौर पर विकल्प के रूप में दिखाई पड़ने वाले रास्तों को अपनाते हुए शहर की तरफ पलायन कर रहे हैं। यह एक सच्चाई है। लेकिन, उसी समय, जब अर्थव्यवस्था सिकुड़ी हुई हालात में है, उस श्रमशक्ति को सोखने की क्षमता नहीं

साम्राज्यवादी गुलामी में भारत

भारतीय समाज आज भी साम्राज्यवादी गुलामी से जूझ रही है। जब 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ब्रिटिश उपनिवेशवादियों ने भारतवर्ष पर कब्जा जमा लिया, तब हमारे देश में सामंती समाज की कोख में पूंजीवाद का विकास शुरू हो रहा था। ब्रिटिश उपनिवेशवादियों ने पूंजीवाद के स्वतंत्र विकास को अवरूद्ध कर दिया और ब्रिटिश औपनिवेशिकवादियों के हितों के अनुरूप भारतीय समाज, सामंती समाज से एक औपनिवेशिक और अर्द्धसामंती समाज में तब्दील हो गया।

दूसरे विश्व युद्ध के दौरान तथा बाद के काल में हुए परिणामों से दुनिया के शक्ति-सन्तुलन को बदलने वाले नए बदलाव उभर कर सामने आने और भारतीय उपमहाद्वीप में भी अंग्रेजों के साम्राज्यवादी शासन का लगभग पतन के कगार पर पहुंचने की स्थिति पैदा हो जाने के कारण साम्राज्यवादियों ने इस निष्कर्ष निकाले कि अपने पुराने औपनिवेशिक और अर्द्धसामंती समाज को अप्रत्यक्ष शासन, शोषण और नियंत्रण वाले एक अर्द्धऔपनिवेशिक-अर्द्धसामंती समाज में रूपान्तरित किया जाए। इसके लिए साम्राज्यवादी उन 'भारतीय' दलालों पर निर्भर रहे हैं जो औपनिवेशिक काल के बिलकुल शुरूआत से उन्हीं के द्वारा पोषित-पालित होते आये हैं। अपना प्रत्यक्ष शासन छोड़ने को बाध्य हुए, साम्राज्यवादी शासकों ने इस शर्त पर उनके दलालों - दलाल नौकरशाह पूंजीपतियों और बड़े जमींदारों - के हाथों में 1947 अगस्त 15 को सत्ता का हस्तान्तरण किया कि साम्राज्यवादी पूंजी और उनके हितों की हिफाजत होती रहेगी। इसके बाद एक अर्द्ध-औपनिवेशिक, अर्द्ध-सामन्ती व्यवस्था ने औपनिवेशिक और अर्द्ध-सामन्ती व्यवस्था की जगह ले ली। औपनिवेशिक काल से लेकर आज तक की भारतीय सामाजिक-आर्थिक व राजनीतिक व्यवस्था के विकास के वस्तुगत अध्ययन से उपरोक्त सच्चाई सामने आ जाती है।

परिणामस्वरूप, ब्रिटिश साम्राज्यवाद की जगह कई साम्राज्यवादी शक्तियों ने ले ली। औपचारिक स्वाधीनता, जो कि अपनी अन्तरवस्तु में नकली स्वाधीनता है, की आड़ में यही वे साम्राज्यवादी ताकतें हैं जो वस्तुत: भारतवर्ष की राजनीति, अर्थनीति और संस्कृति को तथा भारत के शासक वर्गों की तकरीबन सभी महत्वपूर्ण नीतियों को नियंत्रित करती हैं। इस प्रकार वह विभिन्न साम्राज्यवादी शक्तियों के अप्रत्यक्ष शासन, शोषण और नियंत्रण के तहत एक अर्द्धउपनिवेश

बना हुआ है।

साम्राज्यवाद और भारतीय जनता की विशाल बहुसंख्या के बीच का अन्तरविरोध

इस प्रकार तथाकथित स्वाधीनता के बाद भी भारतीय जनता का साम्राज्यवादी शोषण निर्बाध रूप से जारी रहा है। दुनिया में साम्राज्यवाद देशों के शक्तिसंतुलन में आए बदलावों को ध्यान में रखकर, भारत के शासक वर्ग पहले अमेरिकी साम्राज्यवादी के तरफ, उसके बाद 1960 के दशक के अन्त से लेकर दो दशकों से भी ज्यादा समय तक सोवियत साम्राज्यवाद के तरफ, 1990 के शुरूआत से फिर से अमेरिकी साम्राज्यवाद के तरफ तूल देना और देश में दिन ब दिन विभिन्न साम्राज्यवाद देशों के शोषण और उत्पीड़न बढ़ना इसका प्रमाण है।

समूची दुनिया में जारी अपनी नव उपनिवेशवाद की नीतियों, तौर-तरीकों के जरिए साम्राज्यवादियों ने हमारे देश के दलाल नौकरशाह पूंजीपतियों के सहयोग से निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों के विभिन्न उद्योगों में हजारों करोड़ रूपये की पूंजी का निवेश किया है और समूची भारतीय अर्थव्यवस्था को तथाकथित 'मदद' और 'कर्जों' के जरिए अपनी वित्तीय पूंजी के फंदे में फंसा लिया है। अपने तथाकथित सलाहकारों और विशेषज्ञों की नियुक्ति के जरिए साम्राज्यवादियों ने विभिन्न सरकारी विभागों पर अपने शिकंजे को मजबूत बना लिया है।

वस्तुतः अपने दलालों के सहायता से साम्राज्यवादी अपने मालों के बाजार तथा सस्ते पूंजी-निर्यात के एक स्रोत के रूप में भारतवर्ष को बनाकर रखे हैं और उसकी सम्पदा की लूट-खसोट कर रहे हैं, उसका खून चूस रहे हैं तथा उसके विकास को अवरूद्ध कर रहे हैं।

साम्राज्यवाद, खासकर अमेरीकी साम्राज्यवाद का शोषण और नियंत्रण महज अर्थव्यवस्था के क्षेत्र तक ही सीमित नहीं है। नव उपनिवेशवाद के हथियार के जरिए सैन्य "सहायता और सहयोगों", "सलाहकारों" की नियुक्ति आदि जैसे विभिन्न तौर-तरीकों के सहारे उसने सैन्य नीतियों पर भी अपने प्रभाव, शोषण व नियंत्रण को स्थापित कर लिया है एवं विभिन्न किस्म की सैन्य संधियों के जरिए वे दिन-ब-दिन अपनी स्थिति को मजबूत बनाते जा रहे हैं। और यह सबकुछ हो रहा है "राष्ट्रीय सुरक्षा", "देश की सुरक्षा" आदि विभिन्न किस्म के साइनबोर्डों की आड़ में। साम्राज्यवादियों के हितों के अनुरूप सेना का यह प्रयोग

गरीब किसानों तथा खेतिहर मजदूरों के साथ ही मध्यम किसानों का काफी बड़ा हिस्सा सूदखोरों, महाजनों, पूँजीवाद-परस्त बड़े जमींदारों के चंगुल में ज्यादा से ज्यादा फँसती चली जा रही है। साथ ही साथ उनपर बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थानों का शिकंजा भी कसता चला जा रहा है। दूसरी तरफ साम्राज्यवादी वित्तीय पूँजी की बढ़ती घुसपैठ के साथ-साथ उसकी गिरफ्त भी और मजबूत हुई है। इससे कृषि क्षेत्र में पूँजीवादी उत्पादन-सम्बन्ध कुछ बढ़े हैं, पर यह पूँजीवाद काफी विकृत (distorted)है।

कृषि-क्षेत्र के लिए सरकारी धन का आवंटन 1997-98 से ही घटाते-घटाते गया। कृषि में सार्वजनिक क्षेत्र का निवेश कम हो गयी। सकल पूँजी-निर्माण में कृषि का हिस्सा घट गया। एक तरफ पानी, बिजली, डीजल, खाद, कीटनाशक, मशीनों और कृषि की हर लागत की कीमत में वृद्धि और दूसरी तरफ कृषि उपज के नाममात्र के मूल्य या गैर-लाभकारी मूल्य के चलते बहुसंख्यक गरीब किसान वर्ग और मध्यम किसानों के एक बड़े हिस्से की जमीन प्रायः बड़े जमींदारों के ही हाथ आ रही है।

इसमें कोई शक नहीं कि इस 'हरित क्रान्ति' से कुछ नयी वर्ग-शक्तियाँ सामने आयी हैं। लेकिन इस तथाकथित पूँजीवादी विकास ने आम किसानों को बड़े पैमाने पर बदहाली और उसके चलते भारी असन्तोष पैदा करने के सिवा कृषि क्षेत्र के मौलिक समस्याओं को कुछ भी हल नहीं दिया है। वस्तुतः देश के श्रमशक्ति के 60 फीसदी कृषि क्षेत्र में इस्तेमाल किए जाने के बावजूद, देश के सकल घरेलु उत्पाद (जी.डी.पी.) में कृषि क्षेत्र का हिस्सा सिर्फ 15-20 फीसदी है। इससे आसानी से यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि देश में उत्पादन प्रणाली कितना पिछड़ा हुआ है। कुल मिला कर 'हरित क्रान्ति' के इलाकों में कुछ परिवर्तनों के बावजूद समग्रता में भारत के अर्द्ध-सामन्ती सम्बन्धों में कुछ परिमाणात्मक बदलाव के सिवा खास अहमियत रखने वाला कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। पंजाब जैसा प्रदेश इसका एक उदाहरण है जहाँ काफी हद तक विकृत पूँजीवादी सम्बन्धों का प्रसार हुआ है, लेकिन इनका चरित्र मूलतः अर्द्ध-सामन्ती ही बना हुआ है।

साम्राज्यवादी वैश्वीकरण की नीतियों से कृषि का क्षेत्र सबसे ज्यादा बुरी तरह प्रभावित हो चला है। अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा विश्व बैंक जैसी

कृषि-उत्पादों के बेचने और कृषि के लिए जरूरी चीजें वहां से खरीदने के क्रम में व्यापक किसान-जनता का बेईमान व्यापारियों द्वारा निर्मम शोषण करने के जरिए उनका सारा कुछ निचोड़ लिया जा रहा है। सामंती ताकतों के समक्ष गरीब और भूमिहीन किसानों की, जो किसान-जनता के बहुसंख्यक हिस्सा है, अनगिनत रूपों में दासता और व्यक्तिगत गुलामी को विचारधारात्मक संस्थानों और राजसत्ता के दमनकारी व उत्पीड़क अंगों, यहां तक कि निजी सेनाओं द्वारा स्थायी बनाया गया है।

1947 के सत्ता-हस्तान्तरण के बाद भारतीय शासक वर्ग ने ''जोतने वालों को जमीन'' पर आधारित आमूल-चूल परिवर्तनकारी भूमि-सुधारों की जगह साम्राज्यवादियों और अपने हितों को पूरा करने वाली, विकास के वैकल्पिक मॉडलों को बढ़ावा देने के लिए कई कदम उठाये। पहले तो उन्होंने फोर्ड फाउण्डेशन व रॉकफेलर फाउण्डेशन, विश्व बैंक तथा अन्यान्य साम्राज्यवादी एजेंसियों की मदद से और उन्हीं की जरूरतों व योजना के अनुसार सामुदायिक विकास योजना, ग्रामीण सहकारी संस्थाओं, सघन कृषि विकास योजनाओं (IADP) आदि को लागू किया। उसके बाद इन्हीं कदमों की धारावाहिकता में पंजाब और देश के कुछ दूसरे ग्रामीण इलाकों में 1960 के दशक के मध्य में उन्होंने तथाकथित हरित क्रान्ति की शुरुआत की। इस 'हरित क्रान्ति' का असली मकसद न सिर्फ साम्राज्यवादी माल के लिए एक बँधा हुआ बाजार तैयार करना था, बल्कि लाल क्रान्ति से उत्पन्न खतरे का मुकाबला करना और चिरकालिक खाद्यान्न संकट को हल करना भी था।

उत्पादकता और उत्पादन में कुछ वृद्धि होने के बावजूद इस 'हरित क्रान्ति' के नकारात्मक नतीजे जल्दी ही सामने आने लगे। इसने कृषि लागत की कीमतों में भारी वृद्धि की, जबकि कृषि उपज की कीमतें बहुत ही कम बढ़ीं या तकरीबन स्थिर ही रही। नतीजतन किसानों की हालत सुधरने के बजाय बिगड़ती चली जा रही है, जबकि साम्राज्यवादियों के कृषि-उत्पादों, मसलन खेती की मशीनों, रासायनिक खाद, उन्नत बीज व कीटनाशकों आदि का बाजार और साथ-साथ उनका मुनाफा भी बढ़ता जा रहा है। कुछ मुट्ठीभर बड़े जमींदारों, जिनमें पुराने धनी किसानों के बीच से उभरे कुछ नये पूंजीवाद-परस्त बड़े जमींदार भी शामिल हैं, को छोड़कर किसानों की विशाल बहुसंख्या, खास कर

सिर्फ भारतवर्ष के क्रांतिकारी आंदोलनों और राष्ट्रीय मुक्ति संघर्षों को कुचलने के लिए ही नहीं किया जा रहा, बल्कि दूसरे देशों में भी किया जा रहा है।

अमेरिका द्वारा रटा जा रहा रणनीतिक सहयोग और रणनीतिक भागीदारी का मकसद है भारत को दुनिया भर में अमेरिकी नीतियों का समर्थन बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित करना, यहां के कच्चे मालों पर उसका जागीरदारी कायम करना, बड़े पैमाने पर अपने देशों में मुनाफें ले जाना, भारतीय रक्षा क्षेत्र में अमेरिका अनुकूल नीतियों का अमल करना, दुनिया भर में 'उग्रवाद' व क्रांतिकारी आंदोलनों के खिलाफ उनके द्वारा लागू नीतियों के पक्ष में भारत को खड़ा रखना, दक्षिण एशिया और समूचे एशिया में भारत को सामने रखते हुए उसके विस्तारवाद के समर्थन में अमेरिकी नीति को और मजबूती से लागू करना।

दक्षिण एशिया में समग्र रूप से भारत की वर्चस्व की स्थिति को देखते हुए साम्राज्यवादियों ने भारत के दलाल शासक वर्गों को हमेशा शह दिया है, बढ़ावा दिया है और उनके विस्तारवादी मन्सूबों को उकसाया है, ताकि वे यहाँ के विशाल व भरपूर मुनाफा देने वाले बाजार पर अपना एकछत्री नियन्त्रण बरकरार रख सके। इसके तहत भारत का दलाल नौकरशाह पूँजीपति वर्ग जहाँ प्रधानत: साम्राज्यवाद की खिदमत करता है, वहीं इस क्षेत्र के देशों की पूँजी, बाजार, कच्चे माल आदि की लूट-खसोट कर उसका अपना स्वार्थ हितों को भी पूरा कर रहा है। भारत के दलाल नौकरशाह पूँजीपति वर्ग का इन विस्तारवादी महत्त्वाकांक्षाओं तथा दखलअन्दाजी और विध्वंसक गतिविधियों के कारण भारतीय विस्तारवादी हित, साम्राज्यवाद की शह पर अपनी विशाल, सामर्थ्यवान सेना और मजबूत केन्द्रीकृत राज्यतन्त्र के नाते दक्षिण एशिया के देशों की सुरक्षा और सम्प्रभुता के लिए, खास कर उनकी जनता के लिए एक भीषण खतरे के रूप में सामने आ चुका है। भारतीय फौज को 1971 में तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) में और 1987 में श्रीलंका में लिट्टे (एल.टी.टी.ई.) के दमन के लिए भेजना; 2009 में लिट्टे का सफाया के लिए संचालित अंतिम युद्ध में संपूर्ण मदद देना; नेपाल के अन्दरूनी मामलों में हस्तक्षेप करना; 2015 की गर्मियों में म्यांमार सीमाओं में घुसकर काउण्टर इंसर्जेन्सी अभियान संचालित करना; 2016 में पाकिस्तान सीमाओं में घुसकर बड़बोलेपन से 'कश्मीर आंदोलनकारियों पर सर्जिकल अभियान' संचालित करना इसका उदाहरण है। इस तरह ये भारतीय शासक वर्ग दक्षिण एशियाई देशों और खास कर उनके जनता

पर साम्राज्यवादी शोषण तथा नियन्त्रण का एक महत्त्वपूर्ण माध्यम बन गये हैं। नयी सामाजिक साम्राज्यवादी चीन को रोकने के लिए, अमेरिका मोदी सरकार से अगस्त 2016 को महत्वपूर्ण सैनिक हिस्सेदार देश के रूप में बदलने के लिए सैनिक समझौता (Logistics Exchange Memorandum Of Agreement-LEMOA) किया है। यह समझौता एक तरफ अमेरिकी साम्राज्यवादी हितों को, तो दूसरी तरफ दक्षिण एशिया में उसके दलाल के रूप में भारत की विस्तारवादी हितों को ही प्रतिबिंबित करता है।

इस तरह साम्राज्यवादियों ने भारत की अर्थनीति, राजनीति, विदेश नीति, सैन्य नीति, राजसत्ता (state) और सरकार की नीतियों व संस्कृति पर या यूं कहें तो, सामाजिक जीवन के सभी पहलुओं पर अपना प्रभाव, शोषण और नियंत्रण कायम कर लिया है। वस्तुत: आज भारतवर्ष नव औपनिवेशिक किस्म का एक अर्द्धउपनिवेश के सिवा और कुछ नहीं है तथा साथ ही यह अन्तरराष्ट्रीय प्रतिक्रांति के मुख्य किलों में से भी एक है। इस तरह साम्राज्यवाद और भारतीय जनता की विशाल बहुसंख्या के बीच का अन्तरविरोध मौजूदा भारतीय समाज के बुनियादी अन्तरविरोधों में से एक है। विश्व समाजवादी क्रांति के तहत संचालित नवजनवादी क्रांति के जरिए ही देश से साम्राज्यवाद को पूरी तरह उखाड़ा जा सकता है।

सामंतवाद के साथ व्यापक जनता का अन्तरविरोध

पश्चिम के देशों के विपरीत, जहां के सामंतवाद को उखाड़ फेंककर पूंजीवाद विकसित हुआ, भारतवर्ष में ब्रिटिश उपनिवेशवाद ने सामंतवाद की रक्षा की और उसे अपना सामाजिक स्तम्भ बना लिया। ब्रिटिश साम्राज्यवादी शासकों द्वारा किसानों की विशाल बहुसंख्या पर सामंती गिरफ्त में कोई बुनियादी फेरबदल किये बिना विकृत पूंजीवादी संबंधों को सामने लाने के नतीजे के बतौर अर्द्धसामंती उत्पादन-संबंध प्रकट हुए। यहां तक कि प्रत्यक्ष औपनिवेशिक शासन की समाप्ति के बाद भी देश में अर्द्धसामंती उत्पादन-संबंध बने रहे। साम्राज्यवादियों ने दलाल नौकरशाह पूंजीपति वर्ग और सामंती वर्ग, दोनों को ही अपने नवऔपनिवेशिक नियंत्रण और शोषण का सामाजिक स्तम्भ बना लिया। भारतीय जनता के इन तीनों मुख्य दुश्मनों के बीच गठजोड़ के चलते विभिन्न सरकारों द्वारा लागू भूमि सुधारों के साथ-साथ कृषि क्षेत्र में लागू की गयी नीतियां खेतिहर

वर्ग-संबंधों के बुनियादी ढांचे में कोई बदलाव नहीं ला सका और तथाकथित आजादी के सात दशक बीत जाने के बाद भी व्यापक ग्रामीण क्षेत्रों के विशाल आबादी का सामंतियों तथा महाजनों व वाणिज्यिक वर्गों शोषण बेरोकटोक जारी रहा।

आज देहाती क्षेत्रों की यह विशिष्टता साफ-साफ परिलक्षित होती है कि ग्रामीण आबादी के एक छोर पर मुट्ठीभर जमींदार व धनी किसान हैं, जिनके हाथों में भूमि संकेन्द्रित है और दूसरी छोर पर हैं गरीब व भूमिहीन किसान। तमाम भूमि सुधारों के दिखावे के बावजूद 30 प्रतिशत से ज्यादा जमीन उन जमींदारों के पास संकेन्द्रित है जो आबादी का महज 5 प्रतिशत ही हैं। कुल किसानों में से करीब 65 प्रतिशत भूमिहीन व गरीब किसान हैं, जिनके पास या तो जमीन है ही नहीं या है भी तो बहुत कम। गाँवों में निर्मम अर्द्ध-सामन्ती शोषण - काश्तकारी प्रथा, आधी फसल तक को हड़प ले जानेवाली बटाईदारी की प्रथा, बन्धुआ मजदूरी जैसे अभी भी बदस्तूर जारी है। काश्तकारी कानून - उनमें जितने भी सुधार हो - में कोई मौलिक बदलाव नहीं हुई। पश्चिम बंग में दशकों से सत्ता संभाल चुकी सीपीएम नेतृत्व वाली संशोधनवादी सरकार द्वारा भूमि सुधारों और काश्तकारी नीति पर बड़बोलेपन से कई कानून लाने के बावजूद, वे सब नाम के वास्ते ही लागू हुए। खेतिहर मजदूरों की संख्या जमीन रखने वाले किसानों से भी अधिक हो गयी। खेतिहर मजदूरों को रोजगार के अभाव के चलते जमींदारों और बागान-मालिकों के यहां बंधुआ मजदूर जैसे अमानवीय श्रम करने को मजबूर हैं। जीविका के अभाव में इनमें से अधिकांश घोर दुर्दशा का जीवन जीने को बाध्य हैं तथा हर वर्ष लाखों लोग भूखमरी, अध भूखमरी और बीमारी की वजह से मृत्यु के शिकार बनते हैं।

भारतवर्ष में सामंती शोषण का एक दूसरा भयावह पहलू महाजनी शोषण है जो किसानों से सूद के रूप में एक विशाल राशि जबरन निचोड़ लेता है। निजी सूदखोरों के साथ-साथ विभिन्न बैंक और वित्तीय कंपनियां भी किसानों का शोषण करती हैं। वस्तुत: बैंकों द्वारा किसानों को पर्याप्त ऋण सुविधा उपलब्ध करवाने में नकाम होने के कारण (ये 13.5 फीसदी ऋण ही उपलब्ध कर पर रही हैं) ग्रामीण इलाकों में निजी सूदखोर व्यापारियों (वे 65 फीसदी ऋण उपलब्ध करवा रहे हैं) किसानों का खून निचोड़ा जा रहा है। बाजार में अपने